ऋग्वेद सार

जीवन-लक्ष्य प्राप्त कराने वाली
ऋग्वेद की १०८ सूक्तियाँ

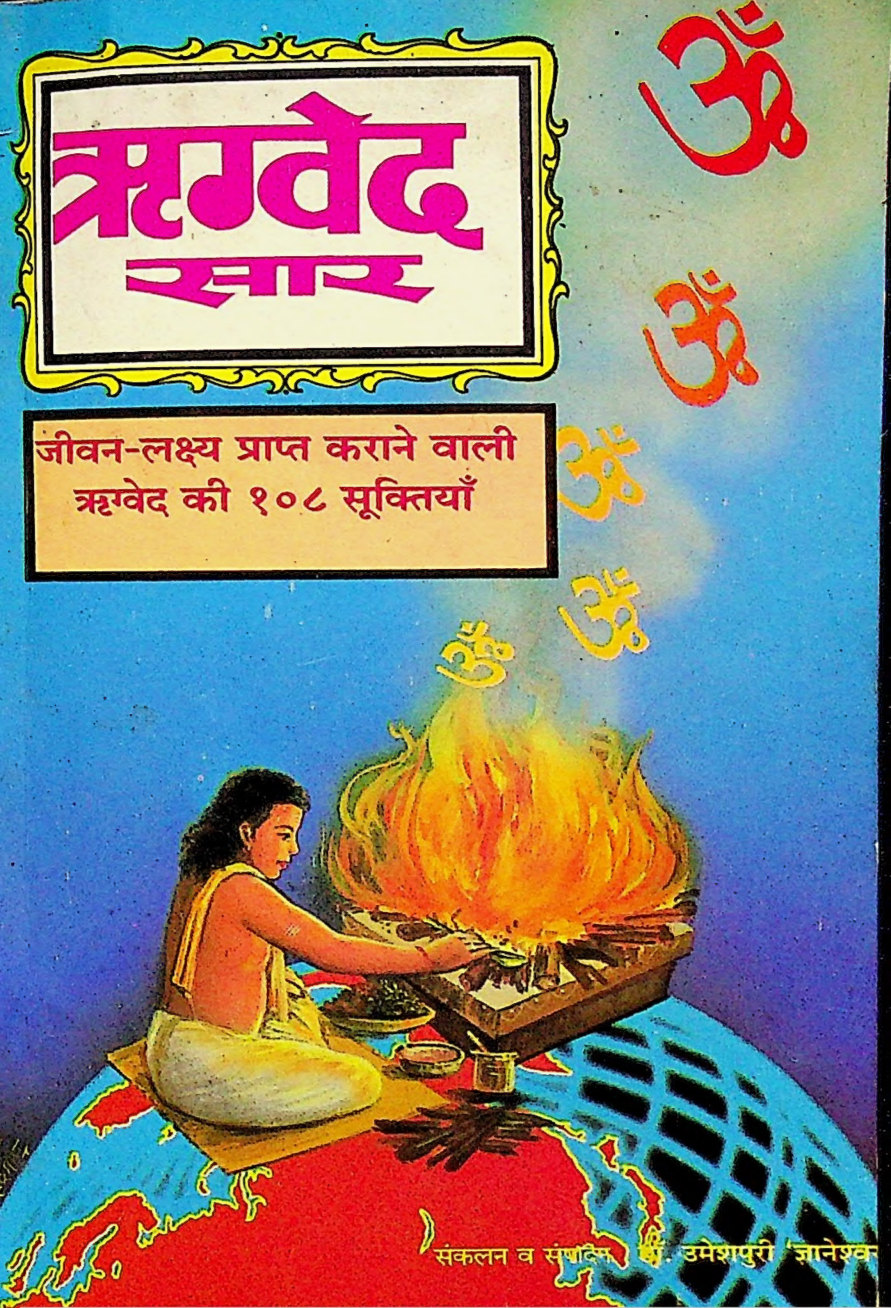

संकलन व संपादक : डॉ. उमेशपुरी 'ज्ञानेश्वर'

ऋग्वेद सार

- इस पुस्तक में **ऋग्वेद** का ज्ञानामृत 108 सूक्तियों में संकलित है जिसे पढ़ व समझकर व्यवहार में लायेंगे तो ज्ञान का संवर्धन होगा।
- ऋग्वेदामृत से परिपूर्ण 108 सूक्तियों की इस सूक्तिमाला को जीवन में व्यवहारिक रूप से जपेंगे तो कर्म के लिए तत्पर होंगे।
- **ऋग्वेद** के अमृत के रसास्वादन से उत्प्रेरित होकर आप ऋग्वेद को उसकी संपूर्णता में जानना चाहेंगे।
- इन सूक्तियों का चयन, संकलन एवं संपादन किया है, आपके प्रिय लेखक **डॉ० उमेशपुरी 'ज्ञानेश्वर'** ने। एक बार पढ़कर तो देखें, आपको लगेगा—जीवन में आत्म-ज्ञान का अनुपम मार्ग मिल गया।

समर्पण

उन वेदव्रतों को जो
वेदों को आत्मसात्
करना चाहते हैं।

—उमेशपुरी 'ज्ञानेश्वर'

ज्ञानोपयोगी वेद पुस्तक माला-एक

ॐ

ऋग्वेद सार

(ऋग्वेद की 108 सूक्तियों का उत्कृष्ट संकलन)

चयन, संकलन एवं संपादन

डॉ० उमेशपुरी 'ज्ञानेश्वर'

बी. एस-सी., एम. ए. (हिन्दी), पी-एच. डी.

ज्योतिष बृहस्पति, ज्योतिष भास्कर।

मूल्य : 20.00

रणधीर प्रकाशन, हरिद्वार

☐ प्रकाशक—
रणधीर प्रकाशन
रेलवे रोड, आरती होटल के पीछे, हरिद्वार
फ़ोन (0133) 426297

☐ लेखक—
डॉ० उमेश पुरी 'ज्ञानेश्वर'

☐ मूल्य—**बीस रुपये**

☐ प्रथम संस्करण—1992
द्वितीय संशोधित संस्करण—1995

☐ मुद्रक—
राजा ऑफसेट प्रिन्टर्स, विकास मार्ग, नई दिल्ली

RIGVED-SAR

(RIGVED KI 108 SOOKTIYAN KA UTKRISHT SANKALAN)

Edited By :
Dr. UMESH PURI 'GYANESHVAR'

Published By :
RANDHIR PRAKASHAN, HARDWAR

Rs. 20/-

अनुक्रमणिका

समर्पण	2
अनुक्रमाणिका	5
वेद स्तुति	6
पुरोवाक्	7-12
स्नेहपाती वेदव्रतों के नाम	13-14
ऋग्वेद की 108 सूक्तियाँ	15-74
–प्रथम मण्डल	15
–द्वितीय मण्डल	31
–तृतीय मण्डल	36
–चतुर्थ मण्डल	41
–पंचम मण्डल	45
–षष्ठ मण्डल	50
–सप्तम मण्डल	56
–अष्टम मण्डल	62
–नवम मण्डल	67
–दशम मण्डल	74
उपसंहार	82
परिशिष्ट-एक–ऋग्वेद के सुवचन	83

वेद स्तुतिः

आब्ब्रह्मन्नब्ब्राह्मणोब्ब्रह्मवर्च्चसीजायतामाराष्ट्रेद्रराज
न्यः शूरऽइषव्योतिव्याधीमहार थोजायतान्दोग्ध्री
धेनुर्व्वोढानड्वानाशुः सप्तिः पुरन्धिर्य्योषांजिष्णूरथे
ष्टव्याः सभेयोयुवास्ययजमानस्यव्वीरोजायतान्निका
मेनिकामेनः त्पर्ज्जन्य्योंव्वर्षतुफलवत्त्योनऽओषधयः
पच्च्ययन्तांय्योगक्षेमोनकल्प्यताम्

ऋग्वेद

द्रविणोदा द्रविण सस्तु रस्य द्रविणोदाः सन रस्य प्रयंसत्।
द्रविणोदा वीरवती मिषन्नो द्रविणो दारासते दीर्घमायुः।
सविता पश्चातात् सविता पुरस्तात् सवितोत्तरात्तात सविता धरात्तात्।
सवितानः सुवतु सर्वतातिं सवितानो रासतां दीर्घमायुः।

पुरोवाक्

वेद शब्द **विद्** धातु से बना है जिसका तात्पर्य है—**जानना**। हम किसी प्रतिपाद्य विषय का ज्ञान उसको जानकर ही कर पाते है। दूसरे शब्दों में कह सकते हैं—**'जानना' ज्ञान का पर्याय है**। वस्तुतः वेद का अर्थ है—ज्ञान।

वेद को **श्रुति** भी कहा जाता है। **श्रु** धातु से **श्रुति** शब्द बना है। **श्रु** से तात्पर्य है—**सुनना**। कहा जाता है कि ऋषियों ने अन्तः में वेद सुने और परमात्मा ने कहे।

वेद चार हैं—**ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद और अथर्ववेद**।

ऋग्वेद की ऋचाओं में देवताओं की प्रार्थना और स्तुतियाँ, **यजुर्वेद** में विभिन्न प्रकार के यज्ञों की चर्चा, **सामवेद** में ऋग्वेद की ही अधिकाँश ऋचाएँ हैं जोकि गेय अर्थात् संगीतमय हैं और **अथर्ववेद** में सांसारिक एवं आध्यात्मिक ज्ञान का भंडार है।

यह पुस्तक **ऋग्वेद** के अमृत का रसास्वादन कराने के लिए लिखी गई है। अतः अब ऋग्वेद की चर्चा करते हैं।

ऋग्वेद क्या है, इससे क्या तात्पर्य है—सर्वप्रथम इसकी चर्चा करते है।

ऋग्वेद सूक्त वेद है। सुउक्त **सू** (उत्तम) व **उक्त** (कथन) अर्थात् उत्तम कथन या सुभाषित। वस्तुतः स्पष्ट है कि उत्तम कथन से युक्त मन्त्रों के समूह को सूक्त कहते हैं। सूक्त को ऋक या ऋचा

भी कहते हैं। ऋक का अर्थ है स्तुतिपरक मन्त्र और वेद का अर्थ है ज्ञान। अतः ऋग्वेद का शाब्दिक अर्थ है—**ऋचाओं का ज्ञान।**

ऋग्वेद की ऋचाओं में प्रधानतः देवताओं की स्तुतियाँ वर्णित हैं। इसके अतिरिक्त ऋषियों ने ज्ञान रूप में अपने चहुँ ओर जो कुछ भी देखा, उसके प्रति अपने विचार मन्त्र-बद्ध कर दिए। प्रकृति की सभी वस्तुएँ उनके चिन्तन का विषय बन सकी हैं, इसीलिए देव-स्तुतियों के साथ-साथ लाभांश में सृष्टि के अनेक रहस्यों का उद्‌घाटन भी हो गया है जो कि पठ्‌नीय और व्यवहार में लाने योग्य है।

ऋग्वेद सबसे प्राचीन है। इसमें 10 मण्डलों एवं 1028 सूक्तों में 10552 मन्त्र हैं। वे मन्त्र उत्तम विचारों से परिपूर्ण व प्रेरणा देने वाले हैं। इन मन्त्रों का परम लक्ष्य मनुष्य को विचारों की पवित्रता अर्थात् ज्ञान देना है। ज्ञान से ही विचारों में पवित्रता आती है जबकि अज्ञान तम का प्रतीक है जो मोह में बांधकर विवेकहीन बना देता है।

ऋग्वेद के दो प्रकार के विभाग उपलब्ध हैं—

1. मण्डल, अनुवाक् और सूक्त।
2. अष्टक, अध्याय और सूक्त।

पहले विभागानुसार ऋग्वेद 10 खण्डों में विभक्त है जिन्हें मण्डल कहते हैं। मण्डल में संगृहीत मन्त्र-समूह को सूक्त कहते है। इन सूक्तों के प्रत्येक खण्ड को ऋचाएँ या मन्त्र कहते हैं। सूक्तों

की संख्या 1017 हैं, कुछ अतिरिक्त (खिल) सूक्त हैं जिनकी संख्या 11 है। इस प्रकार कुल संख्या असमान है। 1 और 10 वे मण्डल में सर्वाधिक सूक्त हैं और द्वितीय मण्डल में सबसे कम सूक्त हैं। प्रत्येक मण्डल के सूक्त और मन्त्रों की संख्या यहाँ दे रहे हैं–

मण्डल	सूक्त	मन्त्र संख्या
1	191	2006
2	43	429
3	62	617
4	58	589
5	87	727
6	75	765
7	104	841
8	103	1716
9	114	1108
10	191	1754
10	1028	10552

दस मण्डलों में 1028 सूक्त हैं जिनमें 10552 मन्त्र अर्थात् ऋचाएँ हैं।

दूसरे विभागानुसार ऋग्वेद में आठ अष्टक हैं, प्रत्येक अष्टक में 8 अध्याय हैं, इस प्रकार ऋग्वेद 64 अध्यायों में विभक्त है।

वेदों के बाद ब्राह्मण ग्रन्थों का स्थान है। इन ग्रन्थों का परम

लक्ष्य यज्ञ विधि और कर्म काण्ड पर प्रकाश डालना था। ब्राह्मण ग्रन्थों के तीन विभाग हैं–

(1) ब्राह्मण
(2) आरण्यक
(3) उपनिषद्

ऋग्वेदीय दो ब्राह्मण ग्रन्थ हैं **कौषीतकी और ऐतेरय।** इन दोनों का परस्पर घनिष्ठ सम्बन्ध है। दोनों ग्रन्थों में यत्र-तत्र एक ही विषय की आलोचना की गई है जबकि मन्त्रों का अर्थ विपरीत प्रकट किया गया है। इन ब्राह्मण ग्रन्थों में सोम और राजसूय यज्ञों का वर्णन है।

आरण्यक ग्रन्थों में अधिकांशतः उपनिषदों के अंश ही संकलित हैं। ऋग्वेद के ऐतरेय और कौषीतकी दो आरण्यक है। ऐतरेय के पाँच ग्रन्थ पाये जाते हैं, इनमें प्रत्येक को आरण्यक ही कहते हैं। दूसरे और तीसरे तो स्वतन्त्र उपनिषद हैं। दूसरे के उत्तरार्द्ध के शेष चार परिच्छेद वेदान्त ग्रन्थ के रूप में गिने जाते हैं, इसीलिए उनका नाम ऐतरेय उपनिषद् है। कौषीतकी आरण्यक के तीन खण्ड हैं। इनमें से दो खण्ड कर्म-काण्ड से परिपूर्ण हैं। तीसरा खण्ड कौषीतकी उपनिषद् कहलाता है।

ऋग्वेदीय उपनिषदों में ऐतरेय, कौषीतकी, वाष्कल और मैत्रायणी हैं।

ऋग्वेद तो स्वयं ही सूक्त-वेद है जिसमें अनेक उत्तम कथन अर्थात् सुभाषित भरे पड़े हैं जो कि प्रेरणास्पद् हैं। वेद-मन्त्रों में कुछ

मन्त्र भाग ऐसे हैं जो स्वयं में पूर्ण वाक्य हैं, उनका अपना स्पष्ट अर्थ है जो प्रेरणादायक है, इन्हें 'सूक्ति' कहते है। सूक्ति से तात्पर्य—सु = उत्तम + उक्ति = कथन, उत्तम कथन अर्थात् उत्तम सुभाषित।

इस पुस्तक में ऋग्वेद के 10552 मन्त्रों में से 108 सूक्तियाँ चयनित करके संकलित की गई हैं। आप इन सूक्तियों को पढ़िए, उस पर मनन कीजिए और तदोपरान्त व्यवहार में लाईए। मुझे पूर्ण विश्वास है—**आप उन्नति के सोपान, सहजता से चढ़ते चले जायेंगे।** इन सूक्तियों का उपयोग लेखों भाषणों और अनेक अवसरों पर भी आसानी से किया जा सकता है।

ऋग्वेद की इन 108 सूक्तियों को एक सूत्र में पिरो देंगे तो ऋग्वेद सूक्तिमाल बन जाएगी। हमारे धर्म-शास्त्रों में सर्व कार्य सिद्धि हेतु 108 मणियों की माला द्वारा जप करने का विधान है। ऋग्वेदामृत से परिपूर्ण 108 सूक्तियों की इस सूक्तिमाल को व्यवहारिक रूप से जपेंगे तो उन्नति का मार्ग अवश्य प्रशस्त होगा।

इस कार्य की पूर्णता में ज्ञात-अज्ञात अनेक विद्वानों की वेद सम्बन्धी पुस्तकों का उपयोग हुआ है जिसके लिए मैं उनका आभारी हूँ। सहचरी डॉ0 कंचन पुरी का भी आभारी हूँ जिनके अमूल्य सुझावों के फलस्वरूप यह कार्य पूर्ण हो सका।

ऋग्वेद की 108 सूक्तियों की यह सूक्तिमाल आपको ऋग्वेद पढ़ने के लिए अवश्य प्रेरित करेगी, यदि ऐसा हो सका तो यह श्रम

सार्थक ही होगा।

प्रकाशक श्री रणधीर सिंह जी के विशेष अनुरोध और प्रेरणा के फलस्वरूप यह पुस्तक शीघ्र आप तक पहुँच सकी, इसके लिए वे साधुवाद के पात्र हैं।

आप ऋग्वेद सूक्तिमाल की इन 108 सूक्तियों को पढ़िए, समझिए और आत्मसात् करके व्यवहार में लाईए, जीवन में सब कुछ आपका होगा।

स्नेह-पत्रों की प्रतीक्षा में. . . ।

5 जनवरी, 1992

सम्पर्क—
ज्योतिष निकेतन
1065/2, शास्त्री नगर,
गढ़ रोड,
मेरठ-250005 (उ0 प्र0)

एक वेदव्रत

ओ३म् उमेश पुरी

(डॉ0 उमेश पुरी 'ज्ञानेश्वर')

स्नेह पाती वेदव्रतों के नाम

(द्वितीय संशोधित संस्करण की भूमिका)

प्रिय वेदव्रतों,

ऋग्वेद-सार नामक लघु पुस्तक आपको रुचिकर, सार्थक एवं उपयोगी लगी, इसका प्रमाण आप द्वारा प्रेषित स्नेह-पत्रों का ढेर है।

ऋग्वेद-सार का द्वितीय संशोधित संस्करण नई साज-सज्जा और विस्तृत व्याख्या सहित पुनः आपके लिए प्रस्तुत है। इस संस्करण के अन्त में परिशिष्ट के अन्तर्गत 'ऋग्वेद के सुचवन' आपके उपयोग के लिए दे रहें हैं।

आप प्रथम संस्करण से स्वयं लाभान्वित हुए और अपना जीवन ज्ञान-प्रकाश से आलोकित करने हेतु निरन्तर उन्नति-पथ प्रशस्त करने में संलग्न रहे।

यह ध्यान रखें कि असफल होने पर निराश कदापि नहीं होना चाहिए। अपितु असफलता को एक ललकार समझकर अपने दोषों और छिद्रों को ढूँढकर उन्हें दूर करने के बाद पुनः पूर्ण समर्पण की भावना सहित प्रयासरत रहना चाहिए, जिसके फलस्वरूप आपको सफलता अवश्य मिलेगी। पढ़ते तो सभी हैं किन्तु पढ़ना तभी सार्थक होता है जब उस पढ़े हुए को समझ कर व्यवहार में लाया जाए। इस तरह के पढ़ने को ही कहते हैं— पढ़कर गुना।

जब आप भी ऋग्वेद-सार को पढ़कर 108 सूक्तियों में से अपने रुचि के अनुरूप कुछ सूक्तियों को चयनित करके पढ़ेंगे और फिर गुनेंगे तो हमें पूर्ण विश्वास है आप अपने लक्ष्य को प्राप्त करने में अवश्य सफल होंगे।

इस पुस्तक में संकलित सूक्तियों को पढ़कर उपयोग में लायें और इससे कुछ पा लें तो साथी, मित्र और भाई-बन्धुओं को भी सूक्तियों से कुछ पा लेने का मूल-मन्त्र सिखा दें। स्वयं लाभान्वित होकर अपने अनुभव से दूसरे को लाभान्वित होने का अवसर प्रदान करने में जो सुख प्राप्त होता है, उसको शब्दों में वर्णित कर पाना असम्भव है।

पाकर बाँटने में ही सुख है। अतः कुछ पा लें तो अपने अनुभवों को स्नहे-पत्रों के रूप में ढालकर प्रेषित करना न भूलें।

स्नेह-पत्रों की प्रतीक्षा में. . . !

15 दिसम्बर, 1994

आपका अपना

सम्पर्क—
ज्योतिष निकेतन
1065/2, शास्त्रीनगर
मेरठ-250005

(डॉ० उमेश पुरी 'ज्ञानेश्वर')

ऋग्वेद की 108 सूक्तियाँ

प्रथम मण्डल

1. महो अर्णः सरस्वती प्र चेतयति केतुना।
धियो विश्वा वि राजति ॥ —(3/12, ऋग्वेद)

विद्या ज्ञान से जगतरूपी महासागर का बोध कराती है और समस्त बुद्धियों को प्रकाशित करती है।

विद्या से ज्ञान मिलता है। ज्ञान-प्राप्ति का सर्वोत्तम साधन पुस्तकों का पठन-पाठ्न अर्थात् स्वाध्याय है इसीलिए कहते हैं कि ज्ञान से बुद्धि विकसित होती है। बौद्धिक विकास से उन्नति का मार्ग प्रशस्त होता है। अतः उत्तम ज्ञानवर्द्धक पुस्तकों का अध्ययन नित्य करना चाहिए क्योंकि अध्ययन से सुविचार मिलते हैं जिनसे सुसंगति की प्रेरणा मिलती है। सुसंगति से और अधिक ज्ञान-वृद्धि होती है जिससे बुद्धि में भी ज्ञान-प्रकाश की वृद्धि हो जाती है। वस्तुतः प्रतिफल में बौद्धिक विकास के साथ-साथ सच्चा-सुख पाने का मार्ग प्रशस्त होता है।

पढ़ लिखकर हम पाते ज्ञान।
ज्ञान बनाता हमें महान ॥

2. अस्मान्त्सु तत्र चोदयेन्द्र राये रभस्वतः।
तु विद्युम्न यशस्वतः॥ —(9/6, ऋग्वेद)

हे तेजस्वी ! प्रयत्नशील और यशस्वी लोगों को ही धन के लिए प्रेरित कर !

हम उद्योगी और यशस्वी हैं और प्रयास करने वाले धन को पाते हैं। धन प्राप्त करने के लिए प्रयत्न करना चाहिए। जो प्रयत्न करता है वह यशस्वी होता है। लक्ष्य निर्धारित करके जो सदैव प्रयत्न करता रहता है, वह उन्नति, धन और यश पाता है। यह जान लें कि प्रयत्न कभी व्यर्थ नहीं जाते हैं।

प्रयत्न न होता कभी व्यर्थ।
मिल जाता जीवन का अर्थ ॥

3. इला सरस्वती मही तिस्रो देवीर्मयोभुवः।
बर्हिः सीदन्त्वस्रिधः॥ —(13/9, ऋग्वेद)

भूमि, सरस्वती और वाणी ये तीन देवियां सुख देने वाली हैं, वे क्षीण न होती हुई आसन पर बैठें।

मातृभूमि, मातृसंस्कृति और मातृभाषा तीन देवियां हैं, इनकी उपासना करनी चाहिए, ये सुखदात्री है। वस्तुतः स्पष्ट है जो मनुष्य

भूमि, सभ्यता और वाणी के प्रति मानवता का भाव रखते हुए उनकी महता समझता है वह इनके द्वारा अनेक सुखों को पाता है। यज्ञ द्वारा इनकी सुरक्षा और उन्नति करनी चाहिए अर्थात् ऐसे कार्य करने चाहिएं जिससे मातृभूमि, संस्कृति और भाषा का गौरव बढ़े। जो इन तीनों का गौरव बढ़ाता है वह हर प्रकार से साधन-सम्पन्न होकर सुखों को पाता है।

धरा, ज्ञान भाषा को मानो।
इन तीनों की महिमा जानो ॥

4. गार्हपत्येन सन्त्य ऋतुना यज्ञनीरसि।

—(15/12, ऋग्वेद)

गृहस्थाश्रम में रहने वाला ऋतु के अनुसार रहकर ही शुभ कर्म करने में समर्थ होता है।

आप ऋतु के अनुरूप स्वयं को ढाल कर गृहस्थ कर्म करने में तत्पर होंगे तो गृहस्थ सुख को पायेंगे। अतः ऋतुओं का सार समझकर निज गृहस्थी से प्यार करना चाहिए, सुख-सम्पत्ति की वृद्धि स्वतः होगी। अतः संयम से अपनी गृहस्थी का लालन-पालन करने वाला ही गृहस्थ-सुख को पाकर समाज में निज गौरव को बढ़ाता है।

संयम का समझे जो सार।
उसे है, गृहस्थी से प्यार ॥

5. देवान् देवयते यज्ञ। —(15/12, ऋग्वेद)

देवाभिलाषी यजमान के लिए देवों की पूजा करो।

देवत्त्व प्राप्ति की इच्छा करने वालों को ज्ञानियों का सत्कार करना चाहिए अर्थात् मनुष्यों को विद्वानों का सम्मान करना चाहिए। ऐसा करने पर ज्ञानियों से ज्ञान की प्राप्ति होती है और सुकर्म करने की प्रेरणा मिलती है। देवताओं के गुणों की प्राप्ति होने से सुख व उन्नति का मार्ग प्रशस्त होता है।

जो करे ज्ञानियों का सत्कार।
वो पाये देवत्त्व से प्यार॥

6. युवाकु हि शचीनां युवाकु सुमतीनाम्।
भूयाम वाजदान्नाम्॥ —(17/4, ऋग्वेद)

शक्तियों का संघटन हो, सुमतियों में एकता हो, और शक्तिशालियों में हम प्रमुख हों।

उत्तम बुद्धि वाले विद्वानों, उत्तम शक्तियों से युक्त वीर और अन्न का दान करने वाले व्यापारी जब एक मत के होंगे तो राष्ट्र की उन्नति होगी। बुद्धिमान ज्ञान के बल पर अन्न और शक्ति से युक्त हो जाता है और सबमें श्रेष्ठ कहलाता है। हम सब का कर्त्तव्य यही होना चाहिए—

आपस के झगड़े छोड़ो, संगठित रहना शुरू करो।
बलशाली बन जीवन में, अपने प्रेम का रंग भरो॥

7. यस्मादृते न सिध्यति यज्ञो विपश्चितश्चन।
स धीनां योगमिन्वति ॥ —(18/7, ऋग्वेद)

जिसके बिना ज्ञानी का यज्ञ भी सिद्ध नहीं होता वह श्रेष्ठ ज्ञानी हमारी बुद्धियों को प्रेरित करे।

विद्वानों की प्रसन्नता के बिना ज्ञानी का भी यज्ञ (ज्ञान) पूर्ण नहीं होता है। ज्ञान ही हमारी मानसिक वृत्तियों को सम्बन्ध-युक्त किए हुए है। यह सर्वविदित है कि विद्वानों की सभा का सभापति श्रेष्ठ विद्वान होता है और उसकी प्रमाणिकता के आधार पर ही ज्ञानी का ज्ञान-यज्ञ पूर्ण माना जाता है। विद्वानों की सम्मति से ही ज्ञानी का ज्ञान प्रमाणिक होता है।

ज्ञान बिना कुछ न मिले, यह बात सबने मानी।
ज्ञान की प्रामाणिकता, करता श्रेष्ठ ज्ञानी ॥

8. दाता राधांसि शुम्भति। —(22/8, ऋग्वेद)

सिद्धियों के प्रदाता सूर्यदेव अब प्रकाशित हो रहे हैं।

उदित होता हुआ सूर्य अपने ताप और प्रकाश से स्वास्थ्य एवं ऊर्जा सम्बन्धी अनेक सिद्धियों को देने वाला है। अतः तुम भी सूर्य देव की तरह सबको समान रूप से अपने ज्ञान और प्रेरणास्पद् विचारों द्वारा लाभान्वित करो। सूर्य का प्रकाश एवं ताप अनेक प्रकार से उपयोगी होता है। यदि हम सब इसकी उपयोगिता को समझ लें तो निश्चय ही सुख-समृद्धि से परिपूर्ण हो सकते हैं।

चमको सूर्य सदृश, करो यश उजियारा।
पर हितकर द्रवीभूत हो, बनो सबका प्यारा ॥

9. सद्यो दाशुषे क्षरसि —(27/6, ऋग्वेद)

दाता को तुम तत्काल धन देते हो।

जो दूसरों को कुछ देता है वो तत्काल कुछ न कुछ पाता है। ज्ञान का दान करने से ज्ञान का संवर्धन होता है। दान देने से यश बढ़ता है। अतः किसी प्रकार भी दान देने से कुछ न कुछ अवश्य प्राप्त होता है। कुछ देने पर ही कुछ पाने की ललक मन में आती है और हम प्रयत्न द्वारा कुछ न कुछ पा लेते है। अतः सबको दानी बनना चाहिए। कर्म करके हम श्रम करते हैं अर्थात् श्रमदान करते हैं। श्रम का प्रतिफल उसकी शुभाशुभता पर निर्भर करता है जोकि देर-सबेर अवश्य मिलता है।

दानी बनकर, करो कल्याण।
तभी मिलेगा तुमको मान ॥

10. त्वमग्न उरुशंसाय वाघते स्पार्हं यद् रेक्णः परमं वनोषि तत्। —(31/14, ऋग्वेद)

तू श्रद्धा से स्तुति करने वाले भक्त को उत्तम और इच्छानुकूल धन देता है।

कर्त्ता जब रुचि के अनुरूप कार्य चयन करके श्रद्धा सहित उसे

पूर्ण करता है तो प्रतिफल में उसे इच्छानुकूल सफलता प्राप्त होती है। कहने का तात्पर्य है कि जो मनुष्य मन लगाकर अभीष्ट प्राप्ति के लिए पूर्ण मनोयोग से कर्मरत रहते हैं, वो पूर्णता को प्राप्त होते हैं अर्थात् लक्ष्य को पा लेते है। सच्ची उपासना तो सुलक्ष्य को निर्धारित करके उसे प्राप्त करने के लिए किया गया कर्म है, जो फलरूप में लक्ष्य तक पहुँचाता है।

सम्यक् कर्म करके, तुम अपने मित्र बनो।
यही है उपासना,-इससे अपना लक्ष्य हरो ॥

11. स त्वं नों अद्य सुमना इहाविता भवा वाजेषु सन्त्य।

—(36/2, ऋग्वेद)

तू आज हमारे ऊपर प्रसन्नचित होकर रक्षक हो।

संरक्षक उत्तम मन वाला होना चाहिए अन्यथा वह रक्षक की जगह भक्षक बन जायेगा। ऐसे लोगों की संगत में रहना चाहिए जो अपने शुद्ध व पवित्र विचारों से रक्षा करें या सुख-दुःख में समान रूप से व्यवहार करें जो सहयोगी नहीं है वो कभी भी रक्षक नहीं बन सकता। मालिक हो या मित्र या सहयोगी या कोई भी जो समीपस्य हो। उत्तम मन-बुद्धि वाला ही होना चाहिए, तभी जीवन में उन्नति-पथ प्रशस्त होगा और सुख-सम्पदा प्राप्त होने के अवसर मिलेंगे।

निश्चित जीवन पथ हो मेरा,
उत्तम बुद्धि हो संरक्षक।

निडर बनकर चलूं उस पथ पर,
जहां मिले न कोई भक्षक ॥

12. महस्ते सतो वि चरन्त्यर्चयो दिवि स्पृशन्ति मानवः।

—(36/3, ऋग्वेद)

महान और सत्य स्वरूप तेरी ज्वालायें फैल रही हैं और तेरी किरणें आकाश तक पहुँचती हैं।

अग्नि का यह गुण है कि उसकी लपटें फैलकर अपना प्रकाश ऊपर-नीचे चहुँ ओर दूर-दूर तक फैलाती है। इससे प्रेरणा लेनी चाहिए। जो मनुष्य या महात्मा सत्यमार्ग का अनुसरण करते हैं उनका यश चहुँ ओर फैलता है। यह कह सकते है कि जो सत्यनिष्ठ और महान है वही ईश्वर दूत या महात्मा बनते हैं। सत्य छिपता नहीं चाहे उसे छिपाने के लिए कितने भी षडयन्त्र रचे जायें। अन्ततः सत्य झूठ की पोल खोलकर अपना प्रभुत्व फैला ही लेता है।

सत्य से बनते हैं महान्।
सत्य से मिलते हैं भगवान ॥

13. अभूदु परमेतवे पन्थ ऋतस्य साधुया।

—(46/11, ऋग्वेद)

यज्ञ का मार्ग दुःख के पार होने के लिए अच्छा बन चुका है।

सत्य का अनुसरण ही सत्य यज्ञ है। सत्य यज्ञ दुःख को भेद कर दुःख-मुक्ति कराता है। वस्तुतः दुःख से मुक्ति के लिए सत्य का मार्ग ही सर्वोत्तम है। सत्य-पथ पर चलकर ही दुःख से मुक्ति सम्भव है। दुःखों से कदापि नहीं घबड़ाना चाहिए क्योंकि दुःख तो सुख प्राप्ति का सोपान् है। सुख तक पहुँचने के लिए दुःख से गुजरना ही पड़ेगा। दुःख सहे बिना तो सुख का आभास ही नहीं होता। इसीलिए कहते हैं कि सत्य सदैव विजय श्री पाता है।

सत्य मार्ग के बनो अनुगामी
न घबड़ाओ दुःख से ।
दुःख तो सुख की है सीढ़ी
निकले यह तब मुख से ॥

14. वि या सृजति समनं व्यर्थिनः पदं न वेत्योदती ।

—(48/6, ऋग्वेद)

उषा ! विद्वानों को कार्य करने के लिए प्रेरित करती है, धनेच्छुओं की भी प्रेरक है, जीवनदायी यह उषा एक स्थान पर स्थिर नहीं रहती है। उषाकाल का समय ऊर्जा प्रदायक है। इसमें कार्य करने से सफलता की अधिक आशा है। विद्वान और मनन करने वाले योग्य पुरुष उषाकाल में उठकर अपनी साधना करते हैं, धन चाहने वाले भी इसी काल में उठकर परिश्रम करते हैं। यह उषा ऊर्जा-वृद्धि व क्षमता बढ़ाने में सक्षम है और इसका उपयोग करना चाहिए। जीवन भी प्रदान करती हुई सर्वत्र चमकती है।

उषाकाल में उठो बनो सूर्य सम तेजस्वी।
कर्म निरत हो, पर दुःख कातर, वर्चस्वी ॥

15. अूनर्वाणं श्लोकमा रोहसे दिवि। —(51/12, ऋग्वेद)

इन्द्र ! द्युलोक में स्थिर यश को प्राप्त होता है।

इन्द्र आकाश का देवता है और मरूतों मेघों द्वारा जल वर्षा-करके पृथ्वी को उर्वरा और शस्य प्रस्वनी बनाता है। इन्द्र अपने कर्मों के कारण स्थिर यश को प्राप्त होता है। अतः हम सबको सुकर्मों को करके अपनी स्थायी कीर्ति बढ़ानी चाहिए इसी में हमारा और सबका कल्याण है।

रखो सुकर्म भावना मन में।
यश फैले तब जन-जन में ॥

16. असमं क्षत्रमसमा मनीषा प्र सोमपा अपसा सन्तु नेमे।
—(54/8, ऋग्वेद)

हे इन्द्र ! तेरा क्षात्र-बल अतुलनीय है, बुद्धि भी अद्वितीय है। ये सोम को पीने वाले मनुष्य कर्म से समृद्धि को प्राप्त करते हैं।

बुद्धि से बढ़कर कोई बल नहीं है। जिनके पास बुद्धि अद्वितीय है उनके पास बुद्धि-बल है। बुद्धि-बल को व्यवहार में लाकर जो कर्म करने के लिए सतत् प्रयत्नशील रहते हैं उनके पास ही बल, महत्ता और सामर्थ्य आती है। यह तो सर्वविदित है **'करत-करत अभ्यास के जड़मति होए सुजान।'**

कर्मभूमि में करो विहार, मन में रखो सद्विचार।
बल, सामर्थ्य बढ़े निशदिन, यश गंगा की बहै धार॥

17. धनस्पृतमुक्थ्यं विश्वचर्षणिं तोकं पुष्येम तनयं शतं हिमाः। —(64/14, ऋग्वेद)

धन से युक्त, सराहनीय, सब लोगों के हितकारी पुत्र एवं पौत्र होते रहें, उसी प्रकार हम सौ वर्ष तक जीवित रहकर पुष्ट होते रहें।

जो धन से युक्त है, और निज कार्यों से सबका हित करते हैं। उनके सुकार्यों और भलाई के कार्यों के कारण उनकी यत्र-तत्र प्रशंसा होती है। ऐसे लोगों के यहाँ पुत्र एवं पौत्र हों। पुत्र व पौत्रों का समुचित ढंग से पालन-पोषण करते हुए हम सब सौ वर्ष तक स्वस्थ रहकर जीवन जीयें।

पर हित करें, नित कर्म करें, रहे न कोई भय।
होकर निरोगी शत जीवी हों, बनकर निर्भय॥

18. ऋतस्य देवा, अनुव्रता गुर्भुवत परिष्टिद्यौन भूम।

—(65/2, ऋग्वेद)

देवों ने सत्यव्रतों के अनुकूल गमन किया, व्रतों का पालन किया, अत्यन्त प्रयासों के बाद भूमि स्वर्ग सदृश सुखदायी बनायी गयी।

देवताओं ने चारों ओर हर प्रकार से अन्वेषण किया। उनके

सत्य और श्रेष्ठ व्रतों के पालने से वसुन्धरा स्वर्ग की तरह रमणीय बन गई। कहने का तात्पर्य यह है कि यदि हम अनुसंधान पूर्वक सभी कार्य समुचित ढंग से करें तो सर्व प्रकार से उन्नति कर सकेंगे।

धन्य-धन्य है जीवन उनका जो है सत्यगामी।
ऐसे सुपुत्रों से कहलाती धरा रत्नों वाली ॥

19. ऋषिर्न स्तुभ्वा, विक्षु प्रशस्तो वाजी न प्रीतो वयो दधाति।
—(66/2, ऋग्वेद)

ऋषि के सदृश स्तुति कर्त्ता और मनुष्यों में प्रशंसनीय, प्रसन्नचित्त, वीर सदृश सर्वहित हेतु निज जीवन अर्पित करता है।

नेता अपने अनुगामियों के हित के लिए अपना जीवन अर्पित कर देता है। तात्पर्य यह है कि नेता रमणीय उपभोग के लिए आवश्यक पदार्थों वाला, शत्रुहन्ता या शत्रुओं पर विजय पाने वाला, मनुष्यों में पूज्य, सदैव प्रसन्न रहने वाला, अनुयायियों का हित करने वाला और उनके लिए अपना जीवन अर्पित करने वाला ही सच्चा नेता है।

दूजों का हित और सबका भला है करता।
सुपथगामी, लोकप्रिय हो, बनता है नेता ॥

20. वस्तुभ्यं दाशाद्, यो वा ते शिक्षात् तस्मै चिकित्वान्, रयिं दयस्व।
—(68/3, ऋग्वेद)

हे अग्ने ! तेरे लिए जो हव्य प्रदान करता है और जो तुझसे

ज्ञान प्राप्त करता है, तू उसकी योग्यता के अनुसार धन देता है।

अग्नि सत्य का प्रेरक और रक्षक है। जो इससे नम्रता और ज्ञान प्राप्त करता है, वह निज योग्यतानुसार साधन-सम्पन्न बनता है अर्थात् ज्ञान बिना व्यक्ति अपूर्ण है, अबोध है उसे कुछ भी ज्ञात नहीं होता। कुछ जानने पर ही वह कुछ करने को तत्पर होता है और कुछ करने के प्रतिफल में ही कुछ पाता है।

ज्ञान से बढ़ती बुद्धि, बुद्धि से हो सत्काम।
सत्काम की सहज साधना, दिलाती धन और सम्मान॥

21. उपक्षेति हितमित्रो न राजा। —(73/3, ऋग्वेद)

अनुकूल मित्र से युक्त राजा की तरह धरा पर रहता है।

हितकारी मित्रों से युक्त व्यक्ति ही इस संसार में सुख से रहता है। वस्तुतः सज्जनों को अपना मित्र बनाना चाहिए। सुमित्र सदैव हित करते हैं सुमित्र रखता है, वह सदैव सुख पाता है।

सुख देता हितकारी मित्र सदा।
कर नहीं सकोगे यह ऋण अदा॥

22. भद्रं कर्णेभिः शृणुयाम देवा, भद्रं पश्यमाक्षभिर्यजत्राः।
थैरङ्गैस्तुष्टुवांसस्तनूभिर्व्यशेम देवहितं यदायुः।
—(89/8, ऋग्वेद)

हे देवगण! हम कानों से कल्याणकारी वचन सुनें। हे यज्ञ के

देवों आंखों से हम कल्याणकारी वस्तु देखें। स्थिर सुदृढ़ अवयवों से युक्त शरीर से युक्त होकर हम तुम्हारी स्तुति करते हुए निर्दिष्ट पूर्णायु प्राप्त करें।

यहाँ यह प्रेरणा मिलती है कि मनुष्य निज कानों से सुविचार सुने, आंखों से सुदृश्य देखे, शरीर सुदृढ़ और सुगठित रखे। ऐसा करने पर अपनां ही हित होगा। जिससे पूर्णायु तक देवों और विद्वानों के हित के लिए संलग्न रहेंगे और फलस्वरूप, कुकर्मों में तो कदापि लिप्त न होंगे।

अच्छा देखो, अच्छा सुनो, अच्छा कहो।
सुकर्म करो, पर हितकर, सब सुखी रहो ॥

23. जीवातवे प्रतरं साध्या धियोऽग्ने सख्ये मारिषामा वयं तव।

—(94/4, ऋग्वेद)

हे अग्ने ! तेरे लिए हवियों को हम दें, तू हमारी आयु वृद्धि के लिए हमारी बुद्धियों को उत्तम बना, तेरी मित्रता प्राप्त कर हम दुःखी न हों।

दीर्घायु के लिए बुद्धि व कर्म शक्ति को उत्तम बनाना चाहिए। कहने का तात्पर्य यह है कि हम जितने भी कर्म करें वे यह सब उत्तम बुद्धि व कर्म-शक्ति से ही संभव है। नीरोगी काया ही प्रथम सुख है स्वस्थ शरीर के लिए भेष सुख तो बाद में प्राप्त होते हैं।

बुद्धि और कर्म शक्ति जिसने बढ़ायी।
सुख-संपत्ति दीर्घायु तक उसने पायी ॥

24. तमित् पृच्छन्ति न सिमो वि पृच्छति स्वेनेव धीरो मनसां यदग्रभीत्। न मृष्यते प्रथमं नापर वचोऽस्य ऋत्वा सचते अप्रदृपितः। —(145/2, ऋग्वेद)

अग्नि से विद्वान ही प्रश्न पूछते हैं क्योंकि सब उससे नहीं पूछ सकते। धीर व्यक्ति जो कर्मरत रहने का दृढ़ निश्चय कर लेता है उसे पहले ही कर डालना है बाद में नहीं क्योंकि यह किसी के कहने-सुनने को सहन नहीं करता। गर्वहीन मनुष्य अग्नि के बल का पाता है।

सधैर्य और गर्वहीन होकर कर्म करते रहना चाहिए। किसी के कहने-सुनने की परवाह न करके लक्ष्य को सदैव सामने रखना चाहिए। ऐसा करने वाला सर्व सुख पाता है। वस्तुतः जिसके पास धैर्य और दृढ़ निश्चय है, वह कर्म से कदापि पीछे नहीं हटता और अभीष्ट को पा लेता है। गर्व उससे कोसों दूर हो जाता है। जो धैर्यवान और विनम्र है, वही शक्तिशाली भी बनता है। कहा भी है—

सधैर्य, दृढ़ निश्चयी बनकर कर्म करो अदा।
गर्वहीन बनकर तुम सुख पाओगे सदा ॥

25. अग्ने त्वं पारया नव्यो अस्मान् त्स्वस्तिभिरति दुर्गाणि विश्वा। —(189/2, ऋग्वेद)

हे अग्ने ! तू अत्यन्त नवीन है, तू इन कल्याणकारी मार्गों से हमें सारे दुर्गम पापों से पार लगा।

यहाँ यह प्रेरणा मिलती है कि हम सदा कल्याणकारी पथ पर चलकर सभी दुःखों से मुक्त हो जाएँ। जो सुपथ पर चलकर सत्य मार्ग का अनुसरण करता है और दूसरों के हित का ध्यान रखता है उसके दुःख स्वतः दूर हो जाते हैं।

सत्य पथ पर चला जो कर्मयोगी।
परहित करके, बनता कभी न भोगी ॥

द्वितीय मण्डल

26. त्वमग्ने राजा वरुणों धृतव्रतस्त्वं मित्रो भवसि दस्म ईडयः। —(1/4, ऋग्वेद)

हे अग्ने ! तू व्रत का धारण करने वाला वरुण राजा है। तू सुन्दर और स्तुति के योग्य मित्र है।

यह अग्नि नियमानुसार चलने वाला, वरणीय, सुन्दर, सबसे प्रेम करने वाला, सज्जनों का पालक सर्वश्रेष्ठ और प्रकाशमान है। अतः नियमों पर चलने वाला मनुष्य ही वरणीय होता है। नेता नियमानुसार व अनुशासन में रहने वाला होगा, तभी उसका अनुसरण करने वाले भी नियम व अनुशासन में रहेंगे। ऐसे व्रती मनुष्य योग्य, प्रशंसनीय व सम्मानीय होते हैं। सबको अपना जीवन नियमों व अनुशासन के साथ जीना चाहिए।

जग का काज नियम से चलता।
अनुशासन बिना काम नही बनता ॥

27. तं देवा बुध्ने रजसः सुदंसस॥ —(2/30,ऋग्वेद)

उत्तम कार्य करने वाले को विद्वान (देव) सर्वश्रेष्ठ स्थान पर स्थापित करते हैं।

जो नेता उत्तम कार्य करता है और उसकी पहुँच जनता के हृदय तक हैं। ऐसे मनुष्य को विद्वान उच्च पद पर सुशोभित करते

हैं अर्थात् राष्ट्र का राजा या शासक बनाते है। अतः सुकर्मों के बल पर अपना जनता व समाज में उच्च स्थान प्राप्त करना चाहिए।

सुकर्म पथ पर जो भी चलेगा।
जीवन-नैया नाविक बन पार करेगा ॥

28. वयमग्ने अर्वता वा सूवीर्य ब्रह्मणा वा चितयेमा जनाँ अति। —(2/10, ऋग्वेद)

हे अग्ने ! हम कुशल अश्वों व ज्ञान से यथेष्ट सामर्थ्य प्राप्त करके सर्वश्रेष्ठ बन जायें।

हम उत्कृष्ट सामर्थ्य से धनी बनकर सर्वश्रेष्ठ बनें। ज्ञान से उच्चता प्राप्त करना दैवीय सम्पत्ति है। दैवीय सम्पत्ति से शाश्वत उन्नति का उत्तम उपदेश मिलता है। अतः ज्ञान मार्ग का अनुसरण करके अपनी सामर्थ्य बढ़ाकर उन्नति पथ प्रशस्त करना चाहिए।

ज्ञान से मिल जाती श्रेष्ठता।
बिना इसके रहती कहाँ विद्वता ॥

29. यः शर्धते नानुददाति शृध्यां। —(12/10, ऋग्वेद)

जो (इन्द्र) अहंकारी को गर्व का अवसर नहीं देता।

अभिमानियों को कुछ न मिलने से उनका अभिमान नष्ट हो जाता है। अहंकार मनुष्य का शत्रु है। अहंकारी कभी सरल हृदय नहीं हो सकता, इसलिए उसे प्रभु का वरद हस्त भी नहीं मिलता।

सहज होकर ही मनुष्य किसी से कुछ पा सकता है। अहंकारी अपना अहित ही करता है। सर्वविदित है कि अहंकार रावण तक का नहीं रहा।

जो अहंकारी है बनता।
सुख उसको याद न करता ॥

30. इन्द्र श्रेष्ठानि द्रविणानि धेहि चित्तिं दक्षस्य सुभगत्वमस्मे।
पौष रयीणामरिष्टिं तनूनां स्वाद्मानं वाचः सुदिनत्वमह्नाम्।

—(21/6, ऋग्वेद)

हमें श्रेष्ठ धन दे, बल का विचार और सौभाग्य दे, धन की वृद्धि और शरीर की नीरोगिता दे, वाणी की मधुरता और दिनों की उत्तमता दे।

मीठी बोली बोलने वाले के सभी दिन सुख से बीतते है। उसका कोई शत्रु नहीं होता है, उसे हर एक से धन प्राप्त होता है, धन से सौभाग्य में वृद्धि होती है। मन सदैव प्रसन्न रहने के कारण शरीर भी स्वस्थ्य रहता है। अतः सब सुखों का मूल वाणी की मधुरता में है।

वाणी सबसे मधुर बोलो।
सारे सुख तुरन्त पा लो ॥

31. साफं जातः क्रतुना साकमोजसा ववक्षिथ साकं वृद्धो वीर्यैः सासहिर्मृधा विचर्षणिः। —(22/3, ऋग्वेद)

हे इन्द्र ! तू बुद्धि के साथ जन्मा, बल के साथ तू सर्वत्र गया, पराक्रम से तू बढ़ा, शत्रुओं को तूने मारा और तू ही सर्व दृष्टा है।

बुद्धि से सम्पन्न हो जाने पर मनुष्य की पहुँच हर कहीं हो जाती है अर्थात् उसका पराक्रम बढ़ जाता है और सब उसे शत्रु (बाधा) नाशक एवं सर्वदृष्टा मानने लगते हैं।

बुद्धि ही है सब सुखदाता।
मानव सारे काम बनाता ॥

32. ऋतावानः प्रतिचक्ष्यानृता पुनरात आ तस्थुः कवयो महस्पथः। ते बाहुभ्यां धमितमग्निमश्मनि नकिः षो अस्त्यरणों जहुर्हि तम्। —(24/7, ऋग्वेद)

सत्यवादी और दूरदर्शी देव माया को देखकर वहां से फिर महान् मार्ग पर खड़े हो गए। उन्नति न करने वाला वहाँ नहीं था। उस बाहुओं से उत्पन्न की गई अग्नि को पर्वतों में उन्होंने छोड़ दिया।

दूरदर्शी और सत्यमार्गी सदैव उत्तम पथ पर चलते है, उन्हें कतई छल-कपट पसन्द नहीं। छली और कपटी से ऐसे लोग सदैव दूर रहते है। फलतः मायावी लोग कभी उन्नति नहीं कर पाते।

सत्यमार्गी जो बना, उन्नति उसके साथ चली।
मायावी जो बना, अवनति उसके पास पली ॥

33. सभेयो विप्रो भरते मती धना। —(24/13, ऋग्वेद)

सभ्य ज्ञानी प्रशस्त धन को धारण करता है।

उत्तम बुद्धि वाला मनुष्य सभा में जाने के योग्य होकर सब तरह के ऐश्वर्य को प्राप्त करता है। सभा में बैठने वाला अग्रणीय होता है, उसका अपना सम्मान होता है और अपनी योग्यता व निज प्रयासों के बल पर धन, यश और सम्मान रूपी धनों से परिपूर्ण होता है।

ज्ञानी के हौसले न होते कभी पस्त।
धन-यश-सम्मान पाकर हो जाता प्रशस्त ॥

34. एता वो वश्म्युद्यता यजत्रा अतक्षन्नायती नव्यसे सम्।
श्रवस्यवां वाजं चकानाः सप्तिर्न रथ्यो अह धीतिमश्याः।
—(31/7, ऋग्वेद)

हे पूजनीय देवों ! तुम्हारे उन्नतिदायक कर्मों को चाहता हूँ। मनुष्य यश प्राप्त करने के लिए उत्तम कर्म करते हैं। यश की अभिलाषा व बल की कामना करने वाले मनुष्य रथ में जुड़े घोड़ों की तरह सदैव कर्म को करता रहे।

मनुष्य को चाहिए कि वह देवता के गुणों से प्रेरणा लेकर सदैव सतत एवं सम्यक कर्म करता रहे जिससे अभीष्ट की प्राप्ति हो। यश और बल की चाह रखने वाले मनुष्य को सदैव कर्म करते रहना चाहिए।

सतत् कर्म होता है जहाँ।
यश और बल होता है वहाँ ॥

तृतीय मण्डल

35. यतस्रुचः सुरुचं विश्वदेव्यं रुद्र यज्ञानां साधदिष्टिमपसाम्।
—(2/5, ऋग्वेद)

सभी विद्वानों का हित करने वाले, शत्रुओं को रुलाने वाले, श्रेष्ठतम कर्मों एवं यज्ञों को पूर्ण करने वाले, अग्नि को यहाँ इस यज्ञ में आगे स्थापित करते है।

जो मनुष्य दूसरों का हित करते हैं और उनकी शत्रुओं से रक्षा करते है, वे अपने श्रेष्ठतम कार्यों से उन्नति और यश को प्राप्त करते है। जो अग्रणीय, उत्तम ज्ञान और कर्म से दिव्य तेज सम्पन्न होता है, ऐसे अग्रणीय को प्रजा (जनता) अपनाती है और अपना नेता स्वीकार करती है।

दूजों की रक्षा करके, हित करें विद्वान्।
श्रेष्ठ कर्म करके, बन जायें महान ॥

36. अपांसि यस्मिन्नधि संदधुर्गिरस्तस्मिन्त्सुन्मानि यजमान आ चके।
—(3/3, ऋग्वेद)

ज्ञानियों ने जिसमें कर्म स्थापित किए, उसी में यज्ञ करने वाला सुखों को ढूँढ़ता है।

जहाँ पर कर्म (यज्ञ) है वहाँ पर सुख है। आलस्य में जीवन का नाश है। कर्म करने में ही जीवन का सच्चा सुख है। ज्ञानी अपने

यज्ञ में ही सुख की तलाश करता है। कर्मयोगी बनें क्योंकि कर्म करने वाला निज प्रयत्नों के फलस्वरूप फल को पाता ही है, अब चाहे उसे फल की चिन्ता न हो। शुभाशुभ कर्मों के अनुरूप शुभाशुभ फल अवश्य मिलता है। जैसी कर्म की प्रकृति होती है फल भी वैसा ही होता है। फल तो मिलना ही है इसलिए फल की चिन्ता के बिना ही कर्मरत् रहना चाहिए।

कार्य से करके प्रीति, सुख को वरो।
आलस्य त्याग कर दुःख को हरो॥

37. आ भारती भारतीभिः सजोषा इला देवेमनुष्येभिदग्निः।

—(4/8, ऋग्वेद)

हमारी वाणी दूसरों की वाणियों के साथ मिल जाएँ। मनुष्यों को और देवों की बुद्धि एक हो। तेज भी एक हो।

राष्ट्र में सबकी वाणियाँ एक हों, विरोधी न हों। सबकी बुद्धियां अर्थात् विचारों में परस्पर अनुकूलता एवं सामंजस्य हो। सब विद्वानों और श्रेष्ठ पुरुषों के बताए मार्ग पर चलें और सबमें वैचारिक समानता हो। मनुष्यों की कथनी और करनी में अन्तर न हो। ऐसा होने पर एकता बढ़ेगी और सब एक दूजे के कार्य आयेंगे। राष्ट्र की अखंडता सुदृढ़ होगी और उन्नति बढ़ेगी।

जो कथनी करनी एक माने।
वो ही सत्य जीवन को जाने॥

38. अति तृष्टं ववक्षिथा थैव सुमना असि।

—(9/3 ऋग्वेद)

हे अग्ने ! तू बहुत उत्साह से शब्द करता है इसीलिए तू सदैव प्रसन्न रहता है।

अग्नि जब जलती है तो उसका उत्साह देखने योग्य होता है। अतः जो हमेशा उत्साह से भरा रहता है, वही सदैव प्रसन्न रहता है। उत्साही मनुष्य के मन में आलस्य नहीं घर करता है और निरन्तर प्रसन्नता उत्साहित रहने के कारण साथ में रहती है।

उत्साह जितना बढ़ाओगे।
खुशी को उतना पास पाओगे॥

39. धिया चक्रे वरेण्यो। —(27/9, ऋग्वेद)

बुद्धिपूर्वक कर्म करने वाला ही लोगों के द्वारा वरण करने योग्य होता है।

बुद्धिपूर्वक जो भी कार्य किये जाते हैं। वो सिद्ध होते हैं व सबके द्वारा स्वीकार और प्रशंसनीय होते हैं। बुद्धिबल की महत्ता सभी जानते हैं। जिसके पास बुद्धि है और वह उसका उपयोग करता है तो यह कहने में कोई अतिशययोक्ति नहीं कि वह निश्चय ही उन्नति करेगा।

बुद्धि ही है काम बनाती।
प्रशंसा भी वो खूब दिलाती॥

40. कर्मभिर्महाद्भिः सुश्रुतो भूत्। —(36/1, ऋग्वेद)

मनुष्य अपने महान् कर्मों से प्रसिद्ध होता है।

मनुष्य द्वारा किए गए अच्छे कार्य ही उसे लोकप्रिय करते हैं और उसके मरने के बाद भी उसे सदा के लिए स्मरणीय बना देते हैं। अच्छे कर्मयोगी के अनुसरणकर्त्ता भी अनेक हो जाते हैं जो उनकी कीर्ति चहुँ ओर बढ़ाते रहते हैं। अतः अच्छे कर्म ही करने चाहिएँ।

सुकर्म पथ पर जो भी चलेगा।
प्रसिद्धि तो वो खूब पायेगा ॥

41. ज्योतिर्वृणीत तमसो विजानन्नारे स्याम दुरिता दभीके। —(39/7, ऋग्वेद)

इन्द्र ने जानते हुए अन्धकार से ज्योति को प्राप्त किया। हम पाप से दूर होकर भयहीन स्थान पर रहें।

अन्धकार में कुछ नहीं दिखाई पड़ता है और इस बात का आभास भी नहीं हो पाता कि अन्धकार के गर्भ में क्या रखा है। प्रकाश होते ही अन्धकार में छिपी सभी वस्तुएँ दिखलाई पड़ने लगती हैं। अज्ञान (अन्धकार) जहाँ है वहाँ ज्ञान (प्रकाश) नहीं होता है। ज्ञान प्राप्त करके ही मनुष्य अज्ञान से मुक्त होता है। ज्ञान मिल जाने पर मनुष्य पाप से दूर हो जाता है। पाप मुक्त हो जाने से मनुष्य के मन में भय नहीं रहता और वह निर्भय होकर

स्वतन्त्र रूप से रहता है। अतः ज्ञान से भय को दूर भगाना चाहिए।

अज्ञानी को सभी धमकाते हैं।
डरने से दुःख बढ़ जाते हैं॥

चतुर्थ मण्डल

42. स चेतयन्मनुषो यज्ञबन्धुः । —(1/9 ऋग्वेद)

यज्ञ में सबका बन्धु वह अग्नि मनुष्यों को ज्ञानयुक्त करता है।

यज्ञ में अग्नि की महत्ता सर्वविदित है। अग्नि का यज्ञ से निकट का संबंध है, वे दोनों मानव मन को अपने प्रयासों से चेतन करते हैं। यह एकता का उत्तम उदाहरण है। यज्ञों समारोह में सभी एकत्र होते हैं और एकता का पाठ पढ़ते हैं और एक दूसरे के सुख-दुःख से परिचित होते हैं। यज्ञ कार्य अर्थात् संगठन के कार्यों में लिप्त रहने वाला व्यक्ति ही दूसरों को ज्ञान दे सकता है। जिसको संघ शक्ति या संगठन में विश्वास ही नहीं होता वह दूसरों को कदापि ज्ञान नहीं दे सकता। अतः लोगों में संघ शक्ति में विश्वास उत्पन्न करके उनके मन में ज्ञानदीप जगाना चाहिए। एकता में ही शक्ति है जो संगठन अर्थात् संघ में निहित है।

जो संघ शक्ति को नहीं मानता।
वो ज्ञान दान देना नहीं जानता ॥

43. दितिं च रास्वादितिमुरुष्य । —(2/11, ऋग्वेद)

दानशीलता दे और कंजूसी से हमारी रक्षा कर।

जो कंजूस है वो कभी दान नही दे सकता। दानी सर्वत्र पूजा

जाता है। दान वो ही दे सकता है जो सहृदयी और उदार है और उसके मन में दूसरों के लिए प्यार है। कंजूसी न करके दान देना चाहिए क्योंकि दान से कभी न खत्म होने वाला धन (अमरत्व) बढ़ता है। कुछ बाँटने पर ही और पाने का उत्साह उत्पन्न होता है, प्रतिफल में मनुष्य और तत्पर होकर ढेर सा धन अर्जित कर लेता है।

जो देता है वो पाता है।
तुझे तो व्यर्थ डर लगता है ॥

44. किं स ऋधक् कृणवद् यं सहस्रं मासो जभार शरदश्च पूर्वीः।

—(18/4, ऋग्वेद)

जिसका हजारों मासों और बहुत वर्षों तक भरण पोषण किया है, वह विरुद्ध कर्म क्यों करेगा ?

मनुष्य को चाहिए कि वह अपने आश्रितों का बहुत प्रेम से भरण-पोषण करे और जो स्वामी के आश्रित है उन्हे चाहिए कि वे उसके विरुद्ध कोई काम न करें। आश्रयदाता और आश्रित को परस्पर प्रेम सहित रहना चाहिए, वाद विवाद और विरोध से एक-दूसरे का अहित नहीं करना चाहिए। विश्वासघात, विवाद और विरोध मनुष्य को गर्त में ले जाकर उनका अहित ही करते हैं। इनसे बचना ही उन्नत-पथ पर अग्रसर होना है।

जब आश्रित के दुःख दर्द को बांटोगे।
तब तुम उसकी स्वामी भक्ति को मानोगे ॥

45. ऋतस्य हि शुरुधः सन्ति पूर्वी ऋतस्य धीतिर्वृजिनानि हन्ति। —(23/8, ऋग्वेद)

उचित कर्त्तव्य की शक्तियाँ अनन्त हैं, उचित बुद्धि पापों को नष्ट करती है।

अच्छी बातें दुष्टों को अच्छी नहीं लगती हैं। अच्छे कार्य करने से क्षेत्र और शक्तियों में वृद्धि होती है। इसी प्रकार बुद्धिपूर्वक करने से पापों को उत्पन्न होने का अवसर ही नहीं मिलता है अर्थात् उचित ढंग से किए गए कार्य पापों को उत्पन्न होने से पूर्व ही नष्ट कर देते हैं। उत्तम कर्त्तव्यों में अनना शक्तियाँ निहित हैं। उत्तम बुद्धि ही उत्तम कार्य को करने में तत्पर होती है उत्तम बुद्धियाँ पापों को नष्ट कर देती है, उत्तम स्तुतियाँ दुष्टों को बहरा और स्तुति करने वाले को यशस्वी बनाती हैं।

भयवश जो असत्य कहता है।
डरकर वह कुकर्म करता है॥
बुद्धि का प्रयोग जो करता है।
पापों को वो नष्ट करता है॥

46. प्रियः सुकृत प्रिय इन्द्रे मनायुः प्रियः सुप्रावीः प्रियो अस्य सोमी। —(25/5, ऋग्वेद)

इन्द्र को उत्तम कर्म करने वाला प्रिय होता है, सुपथ से जाने वाला प्रिय होता है, होम यज्ञ करने वाला प्रिय होता है।

जो नेता प्रजा का हित करता है, उसको थोड़े तो क्या बहुत सारे शत्रु भी मिलकर नहीं जीत सकते। इन्द्र को सुकर्म व सुयज्ञ करने वाला व सुपथ पर चलने वाला प्रिय होता है। अतः सुकर्म करने वाले, दूसरों के हित के लिए सुपथ पर चलते हैं तो उसे ईश्वर के साथ-साथ सभी जन चाहते हैं, उसकी कीर्ति चारों दिशा में स्वतः फैल जाती है। सुकर्मों से मनुष्य यशस्वी बनता है और उसका एक समूह होता है जिसका नेतृत्त्व उसके हाथ में होता है और वह स्वयं उनका पथ-प्रदर्शक बन जाता है। ईश्वर भी उत्तम कार्यकर्त्ता, बुद्धिमान, मननशील और निर्बलों के रक्षक व सहायक को प्यार करता है।

सुकर्म करने वाला, लगता सबको प्रिय।
दूसरों को जो सताता, वो बनता अप्रिय ॥

पंचम मण्डल

47. अबोधि होता यजथाय देवानूर्ध्वो अग्निः सुमनाः प्रातरस्थात्। समिद्धस्य रुशददर्शि पाजो महान् देवस्तमासो निरमोचि। —(1/2, ऋग्वेद)

देवों की पूजा करने के लिए देवों को बुलाने वाला यह अग्नि उत्तम मन वाला प्रज्जवलित होकर ऊपर की ओर जाता है तब वह अपनी सामर्थ्य और तेज से अन्धकार मुक्त हो जाता है।

उत्तम मन वाला मनुष्य सदैव उत्तम होता है और फिर वही महान बनकर अज्ञानान्धकार से मुक्त हो जाता है। यहाँ अग्नि के गुण से प्रेरणा दी गई है। जब यज्ञाग्नि प्रज्जवलित की जाती है तो उसका तेजस्वी रूप प्रकट होता है और वह उर्ध्व गति रखती है, फलतः चहुँ ओर का अन्धेरा छट जाता है। अतः जब मन में ज्ञानाग्नि प्रज्जवलित हो जाती है तो मनुष्य सुमन वाला हो जाने के कारण सुपथ पर चलता है क्योंकि वह अज्ञान मुक्त हो चुका होता है। जब देवों की पूजा करने के लिए मनुष्य यज्ञाग्नि को प्रातः प्रज्जवलित करते हैं तब वह प्रसन्न चित्त और उत्साहित होकर यज्ञ पूर्ण करते हैं।

जब ज्ञानदीप जगमग करता है।
तब सुमनी ज्ञान को भरता है॥

48. अधूर्षत स्वयमेते वचोभिः ऋजूयते वृजिनानि ब्रुवन्तः। —(12/5, ऋग्वेद)

हम सरल आचरण करते हैं फिर भी जो हमसे दुष्ट वचन बोलता है वे ही अपने वचनों द्वारा स्वयं नष्ट हो जाएँ।

जो सत्य पथगामी होते हैं, उनसे जो कुटिल वचन कहता है वह अपने कहे वचनों द्वारा स्वयं ही नष्ट हो जाता है। अतः कभी भी कुवचन नहीं कहने चाहियें क्योंकि इनके कहने से हित की अपेक्षा अहित ही होता है। सज्जनों से दुष्ट वचन कहने वाले अपने वचनों से ही नष्ट हो जाते हैं। वचन अच्छे, मन को भाने वाले मधुर हों तो दूजों में लोकप्रिय होने के साथ-साथ घुलमिल जाने में आसानी रहती है।

कुवचन कहकर मानव होता भ्रष्ट।
अन्धकूप में गिरकर होता नष्ट ॥

49. परो मायाभिर्ऋत आस नाम ते। —(44/2, ऋग्वेद)

तू छल कपट से दूर है इसीलिए तेरा नाम सत्य है।

जो व्यक्ति सहज होकर सत्य पथ का अनुगामी हो जाता है तो छल-कपट, ढोंग, असत्य आदि उसे छू तक नहीं पाते और वह जीवन का सच्चा सुख भरपूर पाता है। सज्जनों के साथ जो छल-कपट नहीं करता है, वो सत्य पथ पर सदैव अग्रसर रहता है। वस्तुतः कहने का तात्पर्य यही है कि जो छल-कपट आदि असत्य कार्यों से दूर रहते हैं, उन्हें सत्य लोक की प्राप्ति होती है। अन्ततः वे सत्यपथ के पथिक बनकर सत्यवादी व सत्यधर्मी बन जाते हैं।

सत्य पथ पर तुम बढ़ जाना।
छल कपट को दूर भगाना ॥

50. यादृश्मिन्धायि तमपस्यया विदद् य उ स्वयं वहते सो अरे करत्। —(44/8, ऋग्वेद)

मनुष्य जिस पदार्थ में मन लगा लेता है, उसे निज पुरुषार्थ से प्राप्त कर लेता है। जो स्वयं परिश्रम करता है, वह काम को पूर्णतः सिद्ध कर लेते हैं।

जो मनुष्य अभीष्ट प्राप्ति के लिए पूर्णतः तत्पर होकर कर्मरत हो जाता है वो अपने परिश्रम और पुरुषार्थ के बल पर उसे पा ही लेता है अतः परिश्रम से कदापि जी नहीं चुराना चाहिए। जो संकल्प करके और फिर संकल्पानुसार लक्ष्य को प्राप्त करने में तत्पर होकर पूर्ण मनोयोग से सश्रम प्रयास करता है तो वह अभीष्ट पा ही लेता है। जो कुछ करने की ठान लेता है वो करके कुछ पा ही लेता है जबकि न करने वाला कुछ भी नहीं पाता।

जिसने कुछ करने की ठानी।
उसने अपनी मंजिल जानी ॥

51. अत्रा न हार्दि क्रवणस्य रेजते यत्रा मतिर्विद्यते पूतबन्धीन। —(44/9, ऋग्वेद)

जिस जगह पवित्रता से बंधी हुई बुद्धि रहती है वहाँ कर्म करने वाले के हृदय के मनोरथ कभी व्यर्थ नहीं होते हैं।

अच्छे वातावरण एवं बुद्धिमानों के संग से शुद्ध विचार प्राप्त होते हैं। सद्ग्रन्थों के पठन-पाठ्न से भी सद्विचार मिलते हैं। सद्विचारों से बुद्धि भी सद्बुद्धि बन जाती है। सद्बुद्धि सुकर्म करने को तत्पर रहती है जिसके प्रतिफल में मन की अभिलाषायें पूर्ण हो जाती हैं।

सद्बद्धि करती सदा सुकर्म, होती पूर्ण आशा।
जीवन की उत्प्रेरक बनती होती दूर निराशा॥

52. ऋतेन विश्वं भुवनं वि राजथः। —(63/7, ऋग्वेद)

सत्य नियम के कारण सारे विश्व में तुम सुशोभित होते हो।

जो बुद्धिमान होते हैं वे सदैव सत्य पथ पर चलते हैं और अपने समस्त सुव्रतों का पालन करते हैं, इसी कारण सारे जगत् में यशस्वी होते है। वस्तुतः सत्य-पथ पर चलते हुए सुकर्मों को करते रहना चाहिए ऐसा करने पर विश्व में लोकप्रियता मिलती है और अन्य सभी साधन जुटते हैं।

जो सत्यपथ पर है सदा चलता।
वो सुव्रती हो, यशस्वी है बनता॥

53. मित्रो भवसि देव धर्मभिः। —(81/4, ऋग्वेद)

देव ! तू अपने गुणों के कारण सबका मित्र होता है।

श्रेष्ठ मनुष्य अपने उत्तम गुणों के कारण ही सबका मित्र बन

जाता है। मनुष्य अपने गुणों और योग्यता से दूजों को प्रभावित करके अपनी ओर आकर्षित कर लेता हैं, फलस्वरूप सबका मित्र बन जाता है।

जिसने निज गुणों को बढ़ाया।
उसने सबको मित्र बनाया ॥

54. य इमे उभे अहनी पुर एत्यप्रयुच्छन्। स्वाधीर्देवः सविता॥

—(82/8, ऋग्वेद)

जो सूर्य देव ! दिन और रात दोनों समय उत्तम कर्म करते हुए आलस्य न करते हुए उदय होता है, उसे हम बुलाते हैं।

सूर्य देव दिन-रात बिना आलस्य किए सबका हित करने में संलग्न रहते हैं और प्रतिदिन समय पर उदित होते हैं। अतः जो मनुष्य बिना आलस्य किए कर्म पथ पर अग्रसर रहता है, वही उन्नति करता है।

जो आलस्य छोड़ सतत् कर्म करता।
वो निज प्रयास से उन्नति करता ॥

षष्ठ मण्डल

55. रयिं जागृवांसो अनुग्मन्। —(1/3, ऋग्वेद)

जागरूक रहकर प्रयत्न करने वाले ऐश्वर्य को पाते हैं।

साधक को सदैव जागरूक रहकर सुमार्ग से धन-प्राप्ति के लिए यत्न करना चाहिए। साधक जाग्रत रहे तो निज प्रयासों से अभीष्ट पा ही लेता है। साधक तभी जागरूक होता है जब उसकी संगत बुद्धिमानों और तेजस्वी मनुष्यों से होती है।

जाग्रत रहकर काम करोगे।
जग में अपना नाम करोगे॥

56. क्रत्वा हि द्रोणे अज्यसेऽग्ने वाजी न कृत्व्यः।

—(2/8, ऋग्वेद)

हे अग्नि! तू मन्थन से उत्पन्न होकर काष्ठ मे गति करता है और वेगवान् अश्व की भांति सदुपयोगी कर्म करता है।

मनुष्य सीमित साधनों के बावजूद भी सतत् पुरुषार्थ करता रहे तो उन्नति पथ प्रशस्त कर लेता है अर्थात् निज पुरुषार्थ से अभीष्ट को पा लेता है। इसके विपरीत यदि मनुष्य दैव (भाग्य) भरोसे बैठा रहे और कुछ भी न करें तो प्रतिफल में भी शून्य हाथ लगेगा।

लक्ष्य मिलेगा तुमको दृढ़ता होगी जब मन में।
पुरुषार्थ करते जाओ छा जाओ जन मन में॥

57. अग्नें स क्षेषदृतपा ऋतेजा। —(3/1 ऋग्वेद)

हे अग्ने ! सत्य के लिए जीवन देने वाला दीर्घायु होता है।

मनुष्य को सत्य बोलना चाहिए। सत्य के पालन के लिए सदैव कटिबद्ध रहना चाहिए। सत्य पथ पर चलने वाला सदा के लिए अमर हो जाता है। सत्य-पथ का पथिक निडर और निष्कपट भावना से सर्वहित की कामना सहित जीवन जीता है इसलिए दीर्घजीवी होता है। इसके विपरीत असत्य का अनुसरण करने वाला हर कदम पर झूठ बोलता है और प्रतिफल में अल्पायु रहता है।

सत्य की डगर पर चलो, करते रहो सतकाम।
युगों-युगों तक चमकेगा, स्वर्ण अक्षरों में सतनाम ॥

58. शोचिषा रारपीति मित्रमहाः। —(3/6, ऋग्वेद)

मित्र सदृश महत्त्व वाला अग्नि निज प्रकाश से बार-बार शब्द करता है।

जिसका मित्र श्रेष्ठ होता है वह स्वतः श्रेष्ठ हो जाता है। जो मनुष्य मित्र के महत्त्व को बढ़ाता है, उसकी आभा स्वतः बढ़ जाती है। अच्छे मित्रों के संग रहने वाला और उनकी प्रशंसा करने वाले को प्रशंसा की आवश्यकता नहीं होती वह स्वतः प्रशंसा और यश का भागी होता है।

समझे जो मित्र को, सर्वत्र करे गुणगान।
तेज बढ़े उस पुरुष का, सर्वत्र हो सम्मान ॥

59. यजस्व तन्वं तव स्वाम्। —(11/2, ऋग्वेद)

निज स्वभूत तन का भी हव्य से पोषण कर।

तू निज तन का सत्कार कर। मनुष्य को अपने शरीर को पुष्ट और स्वस्थ बनाकर उसका सत्कार करना चाहिए। यह सभी जानते है कि स्वस्थ तन में स्वस्थ मन निवास करता है। पहला सुख निरोगी काया है। अतः सन्तुलित आहार से तन का पोषण करके व्यायाम से उसे पुष्ट करना चाहिए। तन स्वस्थ नहीं होगा तो मन भी अस्वस्थ होगा। तन-मन के स्वस्थ हुए बिना कोई भी सुख पाना संभव नहीं। वस्तुतः तन-मन के स्वास्थ्य के लिए सतत प्रयत्न करते रहना चाहिए।

तन को रक्खो हृष्ट-पुष्ट, खाकर उत्तम आहार।
व्यायाम और ध्यान से पाओ स्वास्थ्य-सार॥

60. यत् ते धीतिं सुमतिमावृणीमहेऽधस्मा नस्त्रिवरूथः शिवो भव। —(15/9, ऋग्वेद)

हम तेरे उद्देश्य से कर्म और स्तुति करते हैं और तीनों संरक्षणों से युक्त तू हमारे लिए सुखकर हो।

मनुष्य को अभीष्ट प्राप्ति के लिए तन, मन और बुद्धि के सम्यक् प्रयोग द्वारा सुकर्मरत् रहना चाहिए, तभी मनोवाँछित फल प्राप्त होता है। तन, मन और बुद्धि के सम्यक और सन्तुलित प्रयोग से ही अन्य सभी साधन उपलब्ध होते हैं। इन साधनों से अभीष्ट को पाने में

आसानी रहती है।

तन, मन और बुद्धि का हो सम्यक् प्रयोग।
मनोवांछित फल मिले, जब हो सुकर्म का योग॥

61. क्रत्वा दा अस्तु श्रेष्ठोऽद्य त्वा वन्चन् त्सुरेक्णाः। मर्त आनाश सुवृक्तिम्॥ —(16/26, ऋग्वेद)

आज ही कर्म द्वारा तेरी सेवा करने वाला और दान देने वाला मनुष्य अत्यन्त क्षेष्ठ और उत्तम भाषण करने वाले हो।

मनुष्य को दान देना चाहिए, दूसरों की सेवा करनी चाहिए, धन-धान्य बढ़ाने के लिए यत्न करना चाहिए और सदैव सुवचन कहने चाहिएं। जो मनुष्य दान, सेवा और सुवचनों के द्वारा अपना क्षेत्र बढ़ा लेते है, वह सदैव धन-धान्य से सम्पन्न होकर सुख से जीते हैं।

जो दान देकर करता, दीनों की सेवा।
वो साधन-सम्पन्न बन पाता सुख का मेवा॥

62. अहेळमान उप याहि यज्ञ॥ —(41/1, ऋग्वेद)

क्रोध रहित होकर हमारे यज्ञ में आ।

प्रसन्नचित होकर यज्ञ कार्य में सम्मिलित होना चाहिए। क्रोध में किए गए कार्य का फल अशुभ होता है। अतः प्रसन्नचित्त हो कार्यों को करना चाहिए। क्रोध कदापि नहीं करना चाहिए। क्रोध त्याज्य दें अर्थात् पास में फटकने न दें और धीरज का धन अर्थात्

धैर्य बढ़ाएँ, सुख के द्वार स्वतः खुल जायेंगे।

क्रोधी पागल बन जाए, दुर्घटना कोई भी घट जाए।
धीरज का धन जो बढ़ाए, वो अपने सारे कार्य बनाए॥

63. श्रिय मनांसि देवासो अक्रन्। —(44/8, ऋग्वेद)

ज्ञानी निज मनों को प्रसन्न करने के लिए सुकर्म करते हैं।

कुकर्म करने से बुद्धि भ्रष्ट हो जाती है और मनुष्य अवनति की ओर बढ़ता जाता है। सुकर्म करने का एक अपना आनन्द है। जो व्यक्ति शुभ कर्मों में लिप्त रहता है वो आनन्द की अनुभूति करता है। अच्छे कार्यों को पूर्ण करने पर मन में नया उल्लास, उत्साह और स्फूर्ति उत्पन्न होती है जो आनन्दित मन का लक्षण है। जहाँ आनन्द होता है वहाँ सुख का वास होता है। सद्बुद्धि सुकर्म की प्रेरणा देती है। सत्संग और अच्छी पुस्तकों के स्वाध्याय से बुद्धि शुद्ध होती है।

सुकर्म जो भी है करता।
आनन्द फिर उसको है वरता॥

64. सुवीर्यस्य पतयः स्याम। —(47/12, ऋग्वेद)

हम उत्तम बल के स्वामी बनें।

हम सबको उत्तम सामर्थ्य युक्त होना चाहिए जिससे निर्भयता के साथ जीवन जी सकें। निर्भयता और धैर्य से अनेक बिगडें हुए

कार्य बन जाते हैं। सामर्थ्यहीन व्यक्ति निर्बल होने के कारण डरपोक बन जाता है और घबड़ाकर उलट-पुलट कार्य कर बैठता है। अतः उत्तम बल के स्वामी बनना चाहिए। सामर्थ्य बढ़ने से मन का भय स्वतः निकल जाता है। कहने का तात्पर्य यह है कि आप सर्वत्र निर्भयता स्थापित करके उत्तम सामर्थ्य के स्वामी बनें जिससे निर्भय होकर जीवन जी सकें।

कभी किसी से तुम न डरना।
विपत्ति पडे तो धीरज धरना॥
सामर्थ्य से तुम निज को भरना।
दुःख-विपदा को फिर तुम हरना॥

सप्तम मण्डल

65. यत्रा नरः समासते सुजातः। —(1/4, ऋग्वेद)

जहाँ उत्तम पुरुष एक स्थान पर बैठते हैं।

जब अनेक कुलीन जन एकत्र होकर एक स्थान पर बैठते हैं तो वे विचार का आदान-प्रदान करके एकरूपता लाते हैं और संगठित होते हैं। संगठन में होने से उन्नति पथ शीघ्र और सहज में प्रशस्त होता है। बाह्य शत्रु किसी भी प्रकार अहित नहीं कर पाते।

एकता में शक्ति है, इसे मानो।
एक हो संघठन-शक्ति को जानो ॥

66. नू मे ब्रह्माण्यग्न उच्छशाधि। —(1/20, ऋग्वेद)

मेरे लिए अन्नों को उत्तम प्रकार से पवित्र कर।

मनुष्य जिस आहार को खाता है उसे शुद्ध रीति से तैयार करके खाना चाहिए। आहार मैले हाथों से कभी न बनाएँ। अशुद्ध और गन्दे ढंग से बनाया गया आहार रोग उत्पन्न करके शरीर को जर्जर करता है।

रहते स्वच्छ खाते शुद्ध जो जन।
रखते स्वस्थ निज काया और मन ॥

67. वैश्वानरो वरमा रोदस्योराग्निः ससाद पित्रोरूपस्थम्। —(6/6, ऋग्वेद)

सब मानवों का हित कर्त्ता अग्नि, पृथ्वी के बीच में उच्च स्थान पर बैठ गया।

जो अग्नि सदृश सबका हित करता है वह अपने सुकर्मों के कारण उच्च स्थान या पद पर सुशोभित होता है। अग्नि में रूप परिवर्तन करने की सामर्थ्य है। इसी तरह ज्ञानी जन अपने प्रयासों से लोभों में ज्ञान-चेतना लगाकर सुजीवन जीने की प्रेरणा दे सकते हैं। ऐसा करने पर यश मिलता है और समाज में उत्तमता आती है।

सर्वहित करके जो करता सबसे प्रीत।
सर्वप्रिय होकर वो बनता सबका मीत ॥

68. अग्ने याहि दूत्यं मा रिषण्यो देवाँ अच्छा ब्रह्मकृता गणेन।

—(9/5, ऋग्वेद)

हे अग्ने ! दूत कर्म को करने के लिए तू जा। देवों के प्रति जा। संघ में रहकर ब्रह्म-स्तोत्र करने वाले हमारा विनाश न कर।

ज्ञानी की हर समय प्रशंसा होती है। जो ज्ञान व धन का संवर्धन करता है वो शत्रु को पराजित करने में उत्साही व सामर्थ्यवान् होता है। जो विचारों के आदान-प्रदान से ज्ञान का संवर्धन करते हैं, उनका कभी अहित नहीं होता है।

विचारों को मथकर, संवर्धन करे जो ज्ञान।
अहित उनका कभी न हो, संवर्धक हो मान ॥

69. श्रुष्टिं चक्रुभृगवो द्रुह्यवश्च सखा सखायमतरद विषूचोः।

—(18/6, ऋग्वेद)

भृगु और द्रुह्य शीघ्र प्राप्ति के लिए स्पर्धा कर रहे थे। दोनों स्पर्धकों में मित्र ने मित्र का संरक्षण किया।

द्रोही व डाकू ही द्रुह्य कहलाते हैं। भृगु वह है जो निज भरण-पोषण के लिए तत्पर रहता है। भृगु और डाकू दो स्पर्धक हैं, एक निज जीवन निर्वाह के साधन जुटाता है और एक लूटपाट व डकैती से आजीविका चलाता है, दोनों ही मानव के शत्रु हैं। जो इन दोनों से शत्रुता रखकर सबका हित करता है वही सच्चा मित्र है। अतः मित्र-मित्र को तारता है।

दुर्गुणों को भगाये, गुणों की कराये पहचान।
विपत्ति में साथ निभाये, सच्चा मित्र उसे मान॥

70. दुराध्यो अदिति स्रेवयन्तोऽचेतसो विजगृभ्रे परुष्णीम्।

—(18/8, ऋग्वेद)

दुष्ट बुद्धि वाले मूढ़ शत्रु अन्नदात्री परुष्णी नदी के तट को तोड़ते रहे।

दुष्ट व्यक्ति मूर्ख होते हैं और सदैव विनाश ही करते हैं और उन वस्तुओं को तबाह करते हैं जो जनोपयोगी होती है। दुर्जनों से बचना चाहिए और इसके लिए उनकी संगत नहीं करनी चाहिए। संगत में रहना पड़े तो उनका अनुकरण नहीं करना चाहिए अपितु उनमें परिवर्तन लाने का प्रयास करना चाहिए।

दुर्जन करते सज्जन का पथ भ्रष्ट।
दूर रहो इनसे, न हो इनसे आकृष्ट॥

71. प्रियासः सूरिषु स्याम। —(19/7, ऋग्वेद)

विद्वानों में हम प्रिय हों।

ज्ञान का संवर्थन करते रहना चाहिए, ऐसा करते रहने से मनुष्य विशेष ज्ञानी बनकर विद्वानों में प्रशंसित होता है। अतः ज्ञान मनुष्य को लोकप्रिय बनाता है और अभीष्ट पाने में सहायक है।

ज्ञान से ज्ञान का होता है विस्तार।
ज्ञानी बने विशिष्ट, गुणों का हो प्रसार॥

72. ते मनो विष्वग्रग्वि चारीत्। —(25/1, ऋग्वेद)

तेरा मन इधर-उधर न भटके, वह हमारे हित में लग जाए।

मन तीव्रगामी अश्व की भांति इधर-उधर भटकता रहता है, उसे वश में रखना चाहिए और सुकार्यों में लगाकर सर्वहित की सोचनी चाहिए। ऐसा करने वाला ही सफलता और सुख-शान्ति के साधन जुटा पाता है। एकाग्रता से मन स्थिर होता है और स्थिरता वश निर्णय भी उचित होते हैं जिनके प्रतिफल में अभीष्ट प्राप्ति सहज में हो जाती है। दूजों की भलाई या सर्वहित से मान बढ़ता है और यश की आभा दमकती है।

मन को रखो वश में, करे प्रभु का ध्यान।
सर्वहित कर-करके, बढ़ा लो अपना मान॥

73. यत् पार्या युनजते धियस्ताः । —(27/1, ऋग्वेद)

ज्ञानी जन संकटकाल में बुद्धिपूर्वक यत्न करते हैं।

विनाशकाल में बुद्धि विपरीत हो जाती है, परन्तु जो व्यक्ति. संकट काल में बुद्धि पूर्वक यत्न करते हैं वो संकट से स्वयं को बचा लेते हैं। अतः बुद्धि की महत्ता समझें। बुद्धि-बल से संकट-मुक्ति संभव है।

बुद्धि से करो काम जब आये विपत्ति।
घबराना कभी नहीं, यही है सुमति ॥

74. त्मना समात्सु हिनोत यज्ञं दधात केतुं जनाय तीनम् । —(34/6, ऋग्वेद)

युद्ध में स्वयं जाओ। वीरों को युद्ध के लिए प्रेरित करो लोगों के कल्याण के लिए ज्ञान संवर्धक यज्ञ को करो।

जब सुरक्षा के लिए युद्ध करना पड़ रहा हो उस समय प्रत्येक नागरिक का यह कर्त्तव्य हो जाता है कि वे वीरों को युद्ध के लिए उत्साहित करे। उस समय किसी के आमन्त्रण की प्रतीक्षा न करे। सबके कल्याण के लिए व ज्ञान प्रसार के लिए सदैव तत्पर रहना चाहिए, यही सत्य-पथ है। देश पर आक्रमण या विपत्ति के समय सबको एक जुट होना चाहिए और इनका पालन करना चाहिए—युद्ध

में स्वयं जाना पड़े तो जाना चाहिए, वीरों को युद्ध के लिए प्रेरित करें और वीरों का उत्साह वर्धन करें एवं लोगों में ज्ञान चेतना जाग्रत करें।

सत्य पथ पर चलकर दूजों का करो कल्याण।
ज्ञान संवर्धक बनकर पा लो सबसे मान ॥

अष्टम मण्डल

75. वितर्तूर्यन्ते मघवन् विपश्चितोऽर्यो विपो जनानाम्।

—(1/4, ऋग्वेद)

हे प्रभु ! विद्वान और श्रेष्ठ पुरुष लोगों का पालन करके तेरी कृपा पाकर कष्टों या बाधाओं से मुक्त हो जाते हैं।

जो विद्वान व श्रेष्ठ पुरुष सबका पालन और रक्षारूपी सुकर्म में संलग्न रहते हैं उन्हें प्रभु की विशेष कृपा प्राप्त होती है और वह सभी प्रकार की बाधाओं को सहज में पार कर जाते हैं। जो सर्वहित करते हैं, उनके अनुयायी अनेक हो जाते हैं, इसी कारण अपने हित कर्त्ता की बाधाएँ दूर करने का प्रयास करते हैं।

सर्वहित करके, करो सबका सम्मान।
तेरी बाधा दूर होगी, यह तू जान॥

76. यन्ति प्रमादमतन्द्रा। —(2/18, ऋग्वेद)

आलस्य न करने वाले देव आलसी को परित्यक्त कर देते हैं।

जो आलसी नहीं होते वे आलसी को कदापि पसन्द नहीं करते। आलस्य संग गरीबी सोती है, असफलता उसका वरण करती है। अतः आलस्य कभी नहीं करना चाहिए क्योंकि जो सदैव कर्मरत रहते हैं, वे निज कार्यों से प्रशंसित होते है। जो आलस्य और प्रमादवश कुछ नहीं करते, वे अपना अहित करते हैं और सुअवसर गवाँ देते

हैं। कोई भी श्रेष्ठ जन उसको उत्प्रेरित नहीं करता क्योंकि वे आलसी का सदैव परित्याग ही करते हैं।

आलसी न सुन पाता भाग्य-राग।
विद्वान तो करते उसका त्याग ॥

77. माकिरेना पथा गाद् येनेमे यन्ति चेदयः।

—(5/39, ऋग्वेद)

जिस मार्ग से ये ज्ञानी जाते हैं, उस मार्ग से मूर्ख नहीं जा सकते।

ज्ञानी सुपथगामी होते हैं और मूर्ख अज्ञानी होने के कारण सुपथगामी कदापि नहीं हो सकता। सुपथ पर अग्रसर मनुष्य उन्नति को पाता है जबकि कुपथ पर अग्रसर मूर्ख अवनति को पाता है। अतः सुपथ पर चलकर उन्नति का मार्ग प्रशस्त करना चाहिए। जहाँ ज्ञान का वास होता है वहाँ पर मूर्ख का जाने का साहस नहीं होता है। मूर्ख तो ज्ञानियों से दूर भागता है। मूर्ख तब तक ज्ञानी नहीं बन सकता जब तक उसमें ज्ञान-चेतना जागत नहीं होती है।

ज्ञानी बनना है जिसका धर्म।
वही करता है सदा सुकर्म ॥

78. धिया विप्रो अजायत। —(6/28, ऋग्यवेद)

बुद्धि से ज्ञानी बनता है।

बुद्धि को बढाने से मनुष्य ज्ञानी बनता है। विद्याध्ययन और

स्वाध्याय के बल पर ज्ञानी बनता है। अतः ज्ञान के संवर्धन में बुद्धि को विकसित करना चाहिए। बुद्धि के विकास से उन्नति पथ प्रशस्त होता है। ज्ञानी सदैव सुकर्म करने को तत्पर रहता है। जिसके फलस्वरूप वो उन्नति को पाता है। बुद्धि ज्ञानी को बनाती है। बुद्धि बल उसके पास है जिसके पास ज्ञान-चेतना है। ज्ञान-चेतना स्वतः ज्ञानी बना देती है।

पढकर पुस्तक बढाओ ज्ञान।
उन्नति होगी बढ़ेगा मान ॥

79. पन्थामृतस्य यातवे तमीमीहे। —(12/3,ऋग्वेद)

यज्ञ के मार्ग पर जाने के लिये उस सामर्थ्य को मांगते हैं।

सत्य पथ या यज्ञ मार्ग पर चलने के लिये सामर्थ्य की आवश्यकता होती है। हमें सदा सत्य पथ का अनुसरण करने में अपनी सारी सामर्थ्य और शक्ति लगानी चाहिए। ऐसा करने पर जो भी संकल्प लिए होंगे वे पूर्ण होने में देर नहीं लगेगी।

जो लगाता सत्य के लिए सामर्थ्य।
वो समझता जीवन का सच्चा अर्थ ॥

80. मदेमदे ववक्षिथा सुकृत्वने। —(13/9, ऋग्वेद)

प्रसन्न होने पर सुकर्म करने वाले को धन दे दो।

सुकर्म के प्रतिफल में प्रशंसा मिलती है। जो सुकर्म करता है

उससे विद्वान प्रसन्न ही हो जाते हैं और प्रतिफल में प्रशंसारूपी उपहार देते है। सुकर्मों से यश बढ़ता है, यश वो धन है जिसका कोई मूल्य नहीं होता है। अच्छे कर्म करने वाले को धन के लिए चिन्तित नहीं रहना पड़ता। धन तो स्वतः उसके पास आता है।

पुरुषार्थी की होती बाधाएँ दूर।
जो करे सुकर्म वो पाए यश भरपूर ॥

81. स चिकेत सहीयसाऽनग्नश्चित्रेण कर्मणा।

—(39/5, ऋग्वेद)

वह अग्नि, निज शक्तिदायक कार्य के कारण जाना जाता है।

मनुष्य अपने पराक्रमयुक्त कर्मों के कारण ही सर्वत्र जाना जाता है। अतः कोई भी मनुष्य निज सुकर्मों के कारण ही लोकप्रिय होता है और निज शक्ति के कारण ही शत्रु को परास्त करता है। मनुष्य की शोभा उसके सुकर्मों से बढ़ती है। जिसकी सामर्थ्य और शक्ति उसके कार्यों के कारण बढ़ चुकी है। उसे अपने को प्रकट करने के लिए अपना विज्ञापन नहीं करना पड़ता। उसके कार्य उसे स्वतः जनप्रिय बना देते हैं।

भले काम कर नाम कमाओ।
जीवन अपना सफल बनाओ ॥

82. त्वं ह्यग्ने अग्निना विप्रो विप्रेण सन्त्सता। सखा सख्या समिध्यसे।

—(43/14, ऋग्वेद)

समान स्वभाव वालों की परस्पर संगति उत्तम होती है।

ज्ञानी-ज्ञानी से मिलकर सज्जन-सज्जन से मिलकर और स्नेही-स्नेही से मिलकर प्रसन्न होता है। मनुष्य समान स्वभाव वालों के साथ बैठकर ही प्रकाशमान् होता है। विद्वान की मूर्ख के साथ व सज्जन की दुष्ट के साथ कभी संगति नहीं बैठ सकती। समान विचारों वाले या एक समान स्वभाव वालों में पटती है और उनमें एकता का प्रादुर्भाव होता है जो संघटन शक्ति के विकास के साथ उन्नति पथ पर प्रशस्त करती है।

ज्ञानी से ज्ञानी मिले, बढ़े ज्ञान प्रकाश।
यश बढ़े उतना, जितना बृहद आकाश॥

83. अस्य कृत्वा यशस्वतः। —(102/8, ऋग्वेद)

इस अग्नि के कार्यों से यशस्वी हों।

जिस प्रकार अग्नि अपने परिश्रम एवं प्रयत्न से यशस्वी होती है, उसी प्रकार मनुष्य भी निज कर्म और परिश्रम से यशस्वी होता है। कहने का तात्पर्य यही है कि जो जैसा करता है वो वैसा भरता है। जैसा कर्म वैसा धर्म। पाप करो पापी कहलाओ पुण्य करो सुकर्मी कहलाओ। यह जान लें कि कर्मानुसार फल पाना ही पड़ता है।

जो जैसा करता है, वो वैसा भरता है।
जो जितना करता है, वो उतना पाता है॥

नवम मण्डल

84. मंहिष्ठो वृत्रहन्तमः । —(1/3, ऋग्वेद)

महान बनकर शत्रुनाशक बनो।

जब मनुष्य अपने सुकर्मों से जन-जन के हृदय में छा जाता है तो वह महान बन जाता है और उसका एक विस्तृत क्षेत्र होता है। सभी लोगों के सहयोग और अपने प्रयासों से वह समस्त शत्रुओं का नाश कर देता है। पंच-प्रपंच रूपी शत्रुओं का नाश भी मनुष्य सुकर्म और मन को एकाग्र करके कर सकता है। अतः महान बनकर अपने समस्त शत्रुओं का नाश करना चाहिये।

मनुज शोभता वही जो पर दुःख कातर।
यश बढ़ना उसका होता नाम उजागर ॥

85. अपदृनन्तो अराव्णः । —(13/9, ऋग्वेद)

दान न देने वालों का नाश होता है।

दान देते रहने से मित्र बढ़ते हैं। जो दान नहीं देते हैं और निज स्वार्थों तक सीमित रहते हैं उनके शत्रु अनेक होते हैं। मित्रों के बढ़ने से जीवन सहजता से गुजरता है जबकि शत्रुओं के बढ़ने से जीवन पथ में अनेक बाधायें आती हैं और जीवन जीना कठिन होता है। अतः दान देकर जन-जन के हृदय में वास करना चाहिए।

दान देकर जन-जन को भाओ।
जीवन अपना सहज बनाओ ॥

86. ईशाना पिप्यतं धियः । —(19/2, ऋग्वेद)

स्वामी बनकर बुद्धिपूर्वक किए गए कर्मों का संरक्षण करो।

जो स्वामी बनते हैं और उनके अधिकार क्षेत्र में अनेक जन आते हैं। अधिकारी को चाहिए कि वे न्यांय और नीति के अनुसार सुकर्मों को करके अपने मातहतों व न्याय की रक्षा के लिए सदैव तत्पर रहें। निष्पक्ष भाव से सबका हित करना चाहिए। निष्पक्ष होने पर ही न्याय हो सकता है और न्याय से ही यश बढ़ता है पक्षपात से बुराई जन्मती है और बुराई के साथ-साथ अड़चने भी आती हैं। वस्तुतः ज्ञानी जनों को उत्तम कर्मों का संरक्षण करना चाहिए।

बुद्धिमान हो, करो सदा सुकर्म।
निष्पक्ष हो करो न्याय, यही है धर्म ॥

87. ऋभुर्न रथ्यं नवं दधाता केतमादिशे ।

—(21/6, ऋग्वेद)

जिस तरह स्वामी उत्तम सारथी को नवीन रथ चलाने को कहता है उसी प्रकार हमें उत्तम कार्यों को करने में लगाओ।

मनुष्य को अपने अन्दर योग्यता उत्पन्न करनी चाहिए जिससे स्वामी उसको सुकर्मों को करने में लगाये। उत्तम ज्ञानी को ही श्रेष्ठ कार्यों के लिए चुना जाता है। अतः श्रेष्ठ कार्यों को करने के लिए ज्ञान व अभ्यास के बल पर प्रवीणता लानी चाहिए।

ज्ञानी बन करोगे अभ्यास।
सुकर्म तभी आयेंगे रास ॥

88. सं देवैः शोभते वृषा कविर्योनावधि प्रियः। वृत्रहा देववीतमः ॥ —(25/3, ऋग्वेद)

बलवान, ज्ञानी, प्रिय, शत्रुनाशक व देवप्रिय अपने आश्रय स्थान पर देवों के साथ शोभता है।

जो मनुष्य बलवान, ज्ञानी, सबका प्रिय, शत्रुहन्ता व उत्तम पुरुषों को प्रिय होता है, वह अपनी आश्रय स्थल में विद्वानों की संगति में रहता है। गुणों से श्रेष्ठ जनों का साथ मिलता है और उन्नति के सुअवसर मिलते हैं।

जो बने ज्ञानी, बली और सामर्थ्यवान्।
विद्वानों में बढ़ जाता उसका फिर मान् ॥

89. क्रत्वे दक्षाय नो हिनु। —(36/3, ऋग्वेद)

यज्ञ करने व बल प्राप्ति के लिए हमें प्रेरित कर।

किसी भी व्रत को धारण करके उसे पूरा करना एक यज्ञ है। उत्तम आहार के सेवन व व्यायाम से शारीरिक बल बढ़ता है और सुकर्म और सुविचारों से मानसिक बल बढ़ता है। उत्तम विचारों से ज्ञान मार्ग प्रशस्त होता है और सुकर्म करने की प्रेरणा मिलती है। मनुष्य प्रेरणा से अनेक अच्छे कार्य करने के लिए तत्पर होता है।

फलस्वरूप अभीष्ट पाने में सफल होता है।

यज्ञ व बल के लिए मिलेगी कैसे प्रेरणा।
जब तक नहीं होगी, कुछ करने की धारणा ॥

90. केतुं कृण्वण दिवस्परि विश्वा रूपाभ्यर्षसि।

—(64/8, ऋग्वेद)

ज्ञान दाता अनेक रूपों को देता है।

जो ज्ञान देता है वह धन प्राप्त करने की सामर्थ्य भी देता है। ज्ञान से कर्म करने की प्रेरणा मिलती है जो कर्म करता है उसे प्रतिफल में धन की प्राप्ति होती है। मनुष्य ज्ञान के प्रकाश में ही यह जान पाता है कि उसे क्या करना चाहिए ? सम्यक ज्ञान से सम्यक ढ़ंग से कर्म करने के प्रतिफल में ही धन का उपार्जन होता है। ज्ञान धन दाता है। ज्ञान का संवर्धन ही आने के प्रकार से लाभ कराता है।

जब-जब बुद्धि संग काम करोगे।
तब-तब श्रम से धर्म वर्षा करोगे ॥

91. अग्ने पवस्व स्वपा अस्मे वर्चः सुवीर्यम् दधद्रयिं मयि पोषम् ॥

—(66/21, ऋग्वेद)

हे अग्ने ! उत्तम कर्म करने वाला तू हमें उत्तम पराक्रम करने की शक्ति व तेज प्रदान करो। मेरे अन्दर धन और पोषक शक्ति धारण करो।

अतः स्पष्ट है कि मनुष्य को उत्तम आहार व व्यायाम से शारीरिक शक्ति बढ़ानी चाहिए तभी पराक्रम करने की सामर्थ्य आएगी और फिर बुद्धिपूर्वक किए गए सुकर्मों के फलस्वरूप धन अर्जित होगा। तन, मन व धन से जब सामर्थ्य बढ़ती है तब लक्ष्य और अभीष्ट की प्राप्ति होती है। समरथ को न दोष गोसाई, अतः सामर्थ्य बढ़ाने में तत्पर रहना चाहिए। किन्तु गलत ढंग से सामर्थ्य नहीं बढ़ानी चाहिए।

काया का करके पोषण, बनो बलवान।
उत्तम पराक्रम करके, बनो धनवान ॥

92. यदन्ति यच्च दूरक भयं विन्दति। पवमान वि तज्जहि।

—(67/21, ऋग्वेद)

हे सोम ! जो भय पास है, जो भय दूर है, जो भय मुझे यहाँ प्राप्त होता है उस भय को दूर कर।

जहाँ भय होता है वहाँ घबराहट होती है। जो डरा वो मरा। घबराहट में हार ही होती है अर्थात् असफलता मिलती है। जो निर्भय होता है वो वीर और धीर होता है। डरपोक ही कायर होता है। निर्भयता से धैर्य बढ़ता है और बिगड़े काम भी बन जाते हैं। अतः न तो कभी डरना चाहिए और न घबराना चाहिए।

कभी किसी से तुम न डरना।
विपत्ति पड़े तो धीरज धरना ॥

93. नेममुद्यतम्। —(68/5, ऋग्वेद)

नियमानुसार प्रकाशित होता है।

सूर्य और चन्द्र नियमानुसार उदित होते हैं और नियमानुसार अस्त होते हैं।

सारे काम नियम से चलते।
बिन इनके काम नहीं बनते ॥

जब तक मनुष्य नियमों का पालन नहीं करता तब तक वह नियमित कर्म नहीं करता है। नियमानुसार कर्म करने वाला अनुशासित जीवन जीता है और सफलता के सोपान चढ़ता जाता है। अतः अपने समस्त कार्य नियम से ही करने चाहिये।

94. क्षेत्रविद्धि दिश आहा विपृच्छते। —(70/9, ऋग्वेद)

क्षेत्र को जानने वाला ही पूछने वाले को बता सकता है।

आप किसी स्थान के विषय में जानते नहीं हैं तो पूछने वाले को उस स्थान के विषय में बता भी नहीं सकते। स्थान जानने वाला ही पूछने वाले को वहाँ तक पहुँचने का मार्ग बतला सकता है। ज्ञान से जाना जा सकता है, ज्ञान की महत्ता सर्वत्र है।

कुछ नहीं है, जो जानता।
अज्ञानी है, वो मानता ॥

95. कर्तमव पदात्यप्रभुः। —(73/9, ऋग्वेद)

जो कर्म करने में असमर्थ होते हैं वह अवनति पाते हैं।

जो कर्महीन रहता है, अपने उत्तरदायित्वों को नहीं निभाता है वो सदैव मुँह के बल गिरता है अर्थात् अवनति को पाता है। निज कत्तव्यों को पूर्ण करने वाला ही उन्नति को पाता है। अतः कर्मयोगी बनना चाहिए और निज कर्त्तव्यों को निष्काम भाव से पूर्ण करना चाहिए। फल की नहीं सोचनी चाहिए फल अनुकूल ही मिलेगा। भावना शुद्ध हो तो कर्म भी शुद्ध होते हैं जिसका फल उत्तम ही होता है।

कर्महीन नर कुछ नहीं पाता।
दुःख सारे जीवन में लाता ॥

96. धिया मनोता प्रथमो मनीषी। —(91/1, ऋग्वेद)

बुद्धि पूर्वक मनन करने वाला विद्धान श्रेष्ठ होता है।

जो ज्ञान को मथता है अर्थात् किसी विचार पर मनन करके उसे व्यवहार में लाता है, वो बुद्धिमानों में सर्वश्रेष्ठ होता है। ज्ञान पाना एक बात है, ज्ञान पाकर उसे व्यवहार में लाना दूसरी बात है। जो दूसरी बात का अनुसरण करते हैं वो श्रेष्ठ मनीषी कहलाते हैं। श्रेष्ठ मनीषी सदैव उन्नत पथ पर अग्रसर रहता है।

ज्ञान पाकर जो व्यवहार में लाये।
सुख-सुविधाएँ वो सारी पाये ॥

दशम मण्डल

97. मन्धातासि द्रविणोदा ऋतावा। —(2/2, ऋग्वेद)

तू बुद्धिमान, धन देने वाला और सत्य मार्ग का रक्षक हो।

मनुष्य को ये तीन कार्य अवश्य करने चाहिएं—

1. बुद्धि का संवर्धन करे जोकि ज्ञान प्राप्ति से ही हो सकता है।
2. धनदाता बने अर्थात् किसी न किसी रूप में असहायों, निर्धनों व निर्बलों को धन का दान देना चाहिये।
3. सत्य बोल कर, सत्य पथ का सदैव अनुसरण करना चाहिए।

बुद्धि के संवर्धन से बढ़ता है ज्ञान।
सत्य पथ पर चल, करो धन का दान॥

98. सा मा सत्योक्तिः परि पातु विश्वतो।

—(37/2, ऋग्वेद)

वह सत्य वचन मेरी सर्व प्रकार से रक्षा करें।

सत्य की सदैव विजय होती है। सत्य सिद्धान्तों का अनुकरण करके जो प्रयत्न करता है, उसको सदैव सफलता मिलती है। अतः सबको सत्य पथ का ही अनुसरण करना चाहिए। अपनी भूल को छिपाने के लिए कभी झूठ नहीं बोलना चाहिए। सत्यवादी निर्भय रहता है। वह कदापि नहीं डरता है। सत्यवक्ता में अनेक गुण विद्यमान होते हैं। सत्य से बढ़कर कोई धर्म नहीं, अतः सत्य मानना, सत्य

बोलना और सत्य ही करना चाहिए। मनुष्य सत्य पथ पर चलकर ही महान बनता है। झूठे को तो एक झूठ छिपाने के लिए अनेक झूठ बोलने पड़ते हैं। दूसरों से निगाहें चुरानी पड़ती हैं और मन में हर क्षण भय का वास रहता है।

चपलता न लाओ ऐसी जो बुलाये झूठ।
सत्यपथ पर चलकर झूठ से जाओ रूठ ॥

99. चोदयतं सूनृताः। —(39/2, ऋग्वेद)

उत्तम वचन बोलने मे प्रवृत्त करो।

मधुर और अच्छे वचन सबको भाते हैं। जो भी सुनता है मोहित हो जाता है। मीठा बोलने वाले को सभी पसन्द करते हैं और जल्द ही उसके मित्र बन जाते है। वस्तुतः सदैव मधुर और अच्छे वचन बोलने का प्रयास करना चाहिए।

मधुर वचन सबसे बोलूँ।
कटु वचन को मुख न खोलूँ ॥

100. देवस्य पश्य काव्यं महित्वाऽद्या ममार ह्यः समान।
—(55/5, ऋग्वेद)

इन्द्र देव की महत्त्वपूर्ण सामर्थ्य कि जो आज मरता है, वही फिर उत्पन्न होता है।

जो जन्मता है। वो मरता है और जो मरता है वो जन्मता है।

कोई भी वस्तु जो बनती है वह एक दिन बिगडती (नष्ट) जरूर है। यह प्रकृति का नियम है, जो ईश्वर के द्वारा संचालित होता है अतः जन्म मृत्यु का क्रम चलता रहता है जो आया है वो जायेगा और जो जायेगा वो आयेगा, अब चाहे उसका रूप बदल जाए। मृत्यु से नही डरना चाहिए, जन्म के बाद मृत्यु और मृत्यु के बाद जन्म प्राकृतिक नियम है।

जब जब मृत्यु आती है।
तब तब जीवन लाती है ॥

101. मा प्र गाम पथो वय ॥ —(57/1, ऋग्वेद)

हम सुपथ से कुपथ में न हों।

यहाँ इन्द्र से यह प्रार्थना की गयी है कि सुकर्म करते हुए सुपथ पर बढते रहें नाकि कुत्सित कर्म करके कुपथ पर दौडने लगें। शुभ कर्मो का शुभ व अशुभ कर्मो का अशुभ फल ही होता है। अतः सदैव सुपथ पर ही चलना चाहिए। यदि कुपथ पर दौड़ रहे हैं तो रुक जायें और सुकर्मो मे रत् होकर सुपथ पर चलने लगें। तभी जीवन लक्ष्य की प्राप्ति हो सकेगी। सुपथ पर चलने से सुकर्म करने की चेतना विद्यमान रहती है।

सुकर्म पथ पर जो भी चलेगा।
जीवन-सागर वो पार करेगा ॥

102. अयं में हस्तो भगवानयं मे भगवत्तरः। अयं में

विश्वभेषजोऽयं शिवाभिमर्शनः । —(60/12, ऋग्वेद)

यह मेरा हाथ भाग्यवान् है। यह मेरा हाथ अधिक भाग्यशाली है। यह मेरा हाथ रोगों का निवारक है, यह मेरा हाथ शुभ मंगल बढ़ाने वाला है।

इस मन्त्रों में हाथों की महत्ता बतलायी गई है। एक हाथ सामर्थ्यशाली (भाग्यवान्) है और दूसरा अत्यधिक प्रभावशाली है। इसी प्रकार एक हाथ के पास रोगनाशक शक्तियाँ हैं तो दूसरे के पास शुभ कार्य करने की सामर्थ्य है। जो व्यक्ति इन हाथों से भरपूर कार्य नहीं लेता है उसक लिए उन्नति के सभी रास्ते बन्द हो जाते है।

जो हाथों की महिमा जान न पाये।
वो मनुज जीवन में कुछ कर न पाये ॥

103. यस्ते मन्योऽविधद्वज्र सायक सह ओजपुष्यति विश्वमानुषक्। —(83/1, ऋग्वेद)

हे शस्त्रास्त्रयुक्त उत्साह ! जो तेरा सेवन करता है, वह सब बल और सामर्थ्य को निरन्तर पुष्ट करता है।

यहाँ उत्साह की महत्ता वर्णित है। जिसके पास उत्साह होता है उसको निज प्रयासों से सर्व प्रकार की सामर्थ्य प्राप्त होती है और वह प्रत्येक शत्रु को वश में कर सकता है।

संघर्ष ही समझता है जीवन-अर्थ।
उत्साह से बढ़ जाती है सामर्थ्य ॥

उत्साह से मनुज का बल बढ़ता है, शत्रुओं का पराभव होता है और सुकीर्त्ति बढ़ती है। अतः उत्साह बनाए रखना चाहिए। उत्साहहीन मनुष्य अभागा होता है। उत्साह मनुष्य को हताश नहीं होने देता। जिसके मन में उत्साह नहीं होता है वह मनुष्य दीन, हीन और अन्ततः नष्ट हो जाता है। जो अपनी उन्नति चाहता है उसे सदैव उत्साहित रहना चाहिए।

104. वशी वशं नयस एकज त्वम्। —(84/3, ऋग्वेद)

हे अद्वितीय उत्साह ! तू स्वयं संयमी होने के कारण शत्रु को वश में कर सकता है।

मनुष्य को करना चाहिए—पहले अपना संयम करे, जब संयमित हो जायेगा, तभी सबको वश में कर सकेगा। उन्नति और यश का मूल मन्त्र है—स्वयं को वश में करो, तब सब वश में हो जायेंगे। जिसने स्वयं को जान लिया और निज अन्तः करण को हूबहू जान लिया वो सहज में उत्साह की स्थापना अन्तः में कर सकता है। उत्साहहीन मनुष्य कुछ नहीं कर सकता। उन्नति का यह नियम है कि स्वयं संयमित होकर निरन्तर उत्साहित रहो।

मन को देना संयम की थाप,
उत्साह को रखना सदा पास।

जग जायेगी जीवन की आस,
हाथ आयेगी सबकी रास ॥

105. वदन ब्रह्मावदतो वनयान। —(117/7, ऋग्वेद)

शास्त्र ज्ञाता ब्राह्मण अज्ञानी से अधिक श्रेष्ठ है।

जिसको कुछ ज्ञान नहीं है वो अज्ञानी है। जो शास्त्र का ज्ञाता है उसे ज्ञान होता है, अब चाहे उसका ज्ञान व्यवहारिक न हो, पर उसे ज्ञान है और अज्ञानी की अपेक्षा उसका ज्ञान अधिक है। अतः कुछ जानने वाला कुछ न जानने वाले से श्रेष्ठ होता है।

जो कुछ न जाने, कहलाये अज्ञानी।
जो थोड़ा भी जाने, वो बने ज्ञानी ॥

106. आकूतिः सत्या मनसो में अस्तु। —(128/5, ऋग्वेद)

मेरे मन के संकल्प और प्रार्थना सत्य हों।

प्रत्येक व्यक्ति चाहता है उसकी मनोकांक्षाएँ और जो ईश्वर से की गई प्रार्थनाएँ हैं वे सब पूरी हों। जो व्यक्ति संकल्प करके उसे पूर्ण करने के लिए उत्साहित होकर कर्मरत् हो जाता है, उसकी मनोकांक्षाएँ और प्रार्थनाएँ पूर्ण हो जाती हैं। अतः संकल्प करके उत्साहित होना चाहिए तदोपरान्त पुरुषार्थ करना चाहिए तभी जैसा सोचा है वैसा होगा।

उत्साह तुम्हारे पास न होगा।
बिन करे कुछ कैसे होगा ॥

107.आपः सर्वस्य भेषजी। —(137/6, ऋग्वेद)

जल सर्वस्व हित करने वाला औषधि रूप है।

जल अमृत है। हमारे शरीर की प्रत्येक कोशिका में 90 प्रतिशत जल है। जल बिना जीवन संभव नहीं है। जल सर्वोत्तम औषधि है। जल के समुचित प्रयोग से अनेक असाध्य रोगों से मुक्ति पाई जा सकती है। प्राकृतिक चिकित्सा में जल का प्रयोग बहुतायत में होता है। सूर्य चिकित्सा में भी जल प्रमुख है। जल में रोग नाश करने वाली अनुपम शक्ति विद्यमान है। अधिक से अधिक जल के पीने से शरीर के विजातीय द्रव्य और विष बाहर निकल जाते हैं और शरीर स्वस्थ हो जाता है।

जब जल का करोगे उत्तम प्रयोग।
तब काया के भाग जायेंगे रोग ॥

108. समानी व आकूतिः आकूतिः समाना हृदयानि वः।
समानमस्तु वो मनो यथा वः सुसहासति ॥

—(191/4, ऋग्वेद)

तुम्हारा संकल्प एक समान रहे और तुम्हारे हृदय एक समान हों। तुम्हारे मन एक समान हों, जिससे तुम्हारा कार्य पूर्ण रूपेण संगठित हो।

संकल्प, मन और विचार जब मेल खाते हैं तो एकता का

सूत्रपात हो जाता है जिससे संगठन के कारण कठिन कार्य भी पूरे हो जाते हैं।

संकल्प, मन और विचार होंगे जब एक।
तब कार्य बनेंगे तुम्हारे अनेक ॥

ज्ञान के लिए तत्पर हों !

उपसंहार

विगत पृष्ठों में ऋग्वेद के अमृतमयी मन्त्रों में से 108 प्रेरक मन्त्र आपके उपयोगार्थ प्रस्तुत किए गये हैं। इन मन्त्रों का अर्थ और व्याख्या सरल भाषा में दे रहे हैं। विश्वास है कि आप मूल भाव को समझकर व्यवहार में लायेंगे तो उन्नतिपथ प्रशस्त होगा। इस श्रम की सार्थकता तभी होगी जब आप इन सूक्तियों को पढ़ व समझ कर व्यवहार में लायेंगे। यदि आपने ऐसा किया तो–

* उत्तम विचारों को अपनायेंगे !
* ज्ञान का संवर्धन करेंगे !!
* कर्म-पथ पर बढ़ते जायेंगे !!!
* जीवन का लक्ष्य पा सकेंगे !!!!

आपको सुपथ पर अग्रसर करते हुए हम ज्ञान रूप में आपके मन में व्याप्त होकर स्थूलतः आपसे विदा लेते हैं।

आप ज्ञानयोगी बनें !

परिशिष्ट-एक

ऋग्वेद के सुवचन

यहां ऋग्वेद से अनमोल वचन संकलित करके 'ऋग्वेद के सुवचन' शीर्षक के अन्तर्गत दे रहें हैं। इन्हें पढ़कर व समझकर व्यवहार में लायें। यदि आपने ऐसा किया तो जीवन उन्नति एवं सुख-शान्ति से परिपूर्ण होगा।

❖ शास्त्रज्ञ अज्ञानी से श्रेष्ठ है। —(ऋग्वेद, 10/117/7)

❖ नास्तिक और अज्ञानी संसार में डूबते हैं।
—(ऋग्वेद, 9/64/21)

❖ हम सरल आचरण करते हैं फिर भी जो हमसे दुष्ट वचन बोलते हैं वे ही अपने वचनों द्वारा स्वयं नष्ट हो जाते हैं।
—(ऋग्वेद,5/2/5)

❖ शाश्वत सत्य नियमों की प्रशंसा तभी फलीभूत होती है, यदि आचरण भी उन्हीं (सत्य नियमों) के अनुकूल हो।
—(ऋग्वेद, 3/4/7)

❖ जो मनुष्य अपनी अन्तरात्मा में ज्ञान-ज्योति जगाता है, उसे प्रभु

का साक्षात्कार अवश्य होता है। —(ऋग्वेद,8/44/1)

❖ मधुर भाषी तथा सत्य सेवी ही आनन्दी होता है।
—(ऋग्वेद, 7/7/4)

❖ आलस्य न करने वाले आलसी को त्याज्य देते हैं।
—(ऋग्वेद, 8/2/18)

❖ अभिलाषा हो तो लक्ष्य सिद्धि हो ही जाती है।
—(ऋग्वेद,1/105/2)

❖ ईश्वर राक्षस वृत्ति और झूठे को मार देता है।
—(ऋग्वेद, 7/104/13)

❖ जो उपद्रवी तत्त्व तुम्हें कुचलना चाहते हैं, उनसे दूर रहो, वे सर्वनाश के दूत हैं। —(ऋग्वेद, 2/23/7)

❖ उषाःकाल विद्वानों को कार्य करने के लिए प्रेरित करता है, धनेच्छुओं का भी प्रेरक है, जीवनदायी यह काल एक स्थान पर स्थिर नहीं रहता है। —(ऋग्वेद, 1/48/6)

❖ ऋषि वह जो मनुष्य का हितकारी है। --(ऋग्वेद,10/26/5)

❖ मिल कर चलो और मिल कर बोलो। —(ऋग्वेद, 10/191/2)

❖ मनुष्यों की और देवों की बुद्धि एक हो।—(ऋग्वेद, 3/4/9)

❖ तुम्हारे संकल्प, हृदय और मन एक समान हों जिससे तुम्हारे कार्य पूर्णतः संगठित हों। —(ऋग्वेद, 10/191/4)

❖ कंजूस पीछे रह जाता है दानी आगे बढ़ जाता है।
—(ऋग्वेद, 10/117/7)

❖ उचित कर्त्तव्य की शक्तियाँ अनन्त हैं, उचित बुद्धि पापों को नष्ट करती है। —(ऋग्वेद, 4/23/8)

❖ सुकर्म करने वाले को विद्वान सर्वश्रेष्ठ स्थान पर स्थापित करते हैं। —(ऋग्वेद, 2/2/30)

❖ ज्ञानियों ने जिसमें कर्म स्थापित किए उसी में कर्त्ता सुखों को ढूँढता है। —(ऋग्वेद, 3/36/1)

❖ बुद्धिपूर्वक कार्य करने वाला ही लोगों के द्वारा वरण करने योग्य होता है। —(ऋग्वेद, 3/27/9)

❖ ज्ञानी निज मन की प्रसन्नता के लिए सुकर्म करते हैं।
—(ऋग्वेद, 6/44/8)

❖ प्रसन्न होने पर सुकर्मी को धन दे देना चाहिए।
—(ऋग्वेद, 8/13/7)

❖ कर्म के लिए सामर्थ्य बढ़ानी चाहिए। —(ऋग्वेद, 8/12/3)

❖ जो कर्म करने में असमर्थ होते हैं वो अवनति को पाते हैं।
—(ऋग्वेद, 9/73/9)

❖ ईश्वर अहंकारी को गर्व का अवसर नहीं देता है।
—(ऋग्वेद, 2/12/10)

❖ गृहस्थी ऋतु के अनुसार रहकर ही शुभ कर्म करने में समर्थ होता है। —(ऋग्वेद, 1/15/12)

❖ जुआरी को सास डाँटती है पत्नी रोकती है।
—(ऋग्वेद, 10/34/3)

❖ जागरुक रहकर प्रयत्न करने वाले ऐश्वर्य को पाते हैं।
—(ऋग्वेद, 16/1/3)

❖ जल्दबाज की बात कोई नहीं सुनता। —(ऋग्वेद, 7/22/5)

❖ जिसने शरीर को तपाया नहीं वह सुख को नहीं पाता।
—(ऋग्वेद, 9/83/1)

❖ सूर्य के समान तेजस्वी बनकर अपनी जीवन-यात्रा पूर्ण कर।
—(ऋग्वेद, 8/32/12)

❖ दम्पत्ति एक स्थान पर रहें, वियुक्त न हों।
—(ऋग्वेद, 10/85/43)

❖ दानशील मनुष्य ही जगत् के चित्र-विचित्र वैभव का भोग करते हैं और वही देवलोक की अनन्त ज्योति का दर्शन कर पाते हैं।
—(ऋग्वेद, 1/125/6)

❖ ईश्वर दाता को तत्काल धन देता है। —(ऋग्वेद, 1/27/6)

❖ दान न देने वालों का नाश होता है।
—(ऋग्वेद, 9/13/9)

❖ मृत्यु के जाल को भेदते हुए आगे बढ़ों और दीर्घायु प्राप्त करो।
—(ऋग्वेद, 6/18/02)

❖ ईश्वर उनकी शक्ति का ह्रास कर देता है, जो सज्जन, उदात्त व्यक्ति के प्रति दुर्व्यवहार करते हैं। —(ऋग्वेद, 5/12/5)

❖ जो दुर्जन सज्जनों को अपशब्दों से अपमानित करते हें, वे अपने विषाक्त वाग्बाणों के स्वयं शिकार हो जाते हैं।
—(ऋग्वेद, 5/12/5)

❖ दुष्ट बुद्धिवाले मूढ़ सदैव ज्ञानोपयोगी वस्तुओं को नष्ट करते हैं। —(ऋग्वेद, 7/32/21)

❖ दुराचारी उत्तम सुख को मत प्राप्त करें।
—(ऋग्वेद, 2/23/8)

❖ याद रख, जीवन का पथ बहुत बड़ा है। दूरदर्शी बन। योग्य सन्त जनों की आवश्यकता पूरी करने में ही धन का सदुपयोग कर।
—(ऋग्वेद, 10/117/5)

❖ आँखों से कल्याणकारी वस्तु देखें। —(ऋग्वेद, 1/89/8)

❖ जो धीर व्यक्ति कर्म करने का दृढ़ निश्चय कर लेता है उसे पहले ही कर डालता है बाद में नहीं क्योंकि वह किसी के कहने-सुनने को सहन नहीं करता है। —(ऋग्वेद, 1/45/2)

❖ यह निर्भीक युवती आगे-आगे चलती है।
—(ऋग्वेद, 7/80/2)

❖ नारी कोमल दृष्टि वाली और पति हितचिन्तक हो।
—(ऋग्वेद, 10/85/44)

❖ नारी नीचे देखे, ऊपर नहीं। पैरों को मिलाकर रखे।
—(ऋग्वेद, 8/33/19)

❖ सच्चरित्र नारी पति को प्रिय होती है।
—(ऋग्वेद, 1/73/3)

❖ सुशील स्त्रियों से मनुष्य प्रसन्न होता है।
—(ऋग्वेद, 10/30/15)

❖ स्त्रियों का प्रेम स्थिर नहीं होता है। —(ऋग्वेद, 10/95/15)

❖ स्त्री का मन रोका नहीं जा सकता। —(ऋग्वेद, 8/33/19)

❖ निन्दा मत करो। —(ऋग्वेद, 4/5/2)

❖ नियमानुसार समस्त कार्य करने चाहिएं।
—(ऋग्वेद, 9/68/5)

❖ प्रकृति की सभी दिव्य शक्तियाँ कितनी ही रहस्यमी हों, सदा कृपालु रहती हैं, स्वभाव से अहिंसक हैं।
—(ऋग्वेद, 1/3/4)

❖ आकाश को पिता, पृथ्वी को माता, चन्द्र को भाई और अखंड प्रकृति को बहन-तुल्य प्रेम और सौहार्द देना चाहिए।
—(ऋग्वेद, 1/191/6)

❖ प्रकृति के शाश्वत नियमों का आदर करो, वे बड़ी मधुरता से जीवन में सहायक होते हैं। —(ऋग्वेद, 4/3/9)

❖ हम सुपथ से कुपथ पर न जाएँ।
—(ऋग्वेद, 10/57/1)

❖ निष्पाप व्यक्ति ही असत्य का प्रतिवाद कर सकता है।
—(ऋग्वेद, 7/28/4)

❖ जो स्वयं परिश्रम करता है, वह काम को पूर्णतः सिद्ध कर लेता है। —(ऋग्वेद, 5/44/8)

❖ पुरुषार्थ के बिना कोई मनुष्य दिव्य शक्तियों की कृपा प्राप्त नहीं कर सकता। —(ऋग्वेद, 4/33/11)

❖ प्रातः जागने वाला प्रभात वेला में ऐश्वर्य पाता है।
—(ऋग्वेद, 1/125/1)

❖ केवल स्वार्थ में ही रत कृपण मनुष्य पाप का भागी बनता है।
—(ऋग्वेद, 10/117/6)

❖ मनुष्य को उचित है कि कोई भी व्यक्ति चाहे वह कितना भी दुर्व्यवहार करे, उससे विक्षिुब्ध न हो तथा प्रतिहिंसा न करे।
—(ऋग्वेद, 1/41/8)

❖ व्यवहार में असावधान बनिए मारे जाते हैं।
—(ऋग्वेद, 1/124/10)

❖ जो इस ब्रह्म को नहीं जानता वह वेद से क्या करेगा।
—(ऋग्वेद, 1/164/36)

❖ हम उत्तम बल के स्वामी बनें। —(ऋग्वेद, 6/47/12)

❖ गर्वहीन मनुष्य अधिक बलवान होता है।
—(ऋग्वेद, 1/45/2)

❖ जहां पवित्रता से बंधी हुई बुद्धि रहती है वहां कर्म करने वाले के हृदय के मनोरथ कभी व्यर्थ नहीं होते हैं।
—(ऋग्वेद, 5/44/9)

❖ बुद्धि के संवर्धन से मनुष्य ज्ञानी बनता है।
—(ऋग्वेद, 8/6/28)

❖ जीवन की सफलता के लिए बुद्धि को प्रखर बनाओ जैसे तलवार की धार। —(ऋग्वेद, 6/47/10)

❖ बहिन को कुदृष्टि से देखना पाप है। —(ऋग्वेद, 10/10/12)

❖ ईश्वर के भक्त को न कोई नष्ट कर सकता न जीत सकता है। —(ऋग्वेद, 10/152/1)

❖ भक्त भगवान का प्यारा है। —(ऋग्वेद, 4/17/16)

❖ जिसने हजारों मासों और बहुत वर्षों तक भरण-पौषण किया है, वह विरुद्ध कर्म क्यों करेगा ? —(ऋग्वेद, 4/18/4)

❖ रथ के पहिए के सामन भाग्य-चक्र भी घूमता रहता है, जो आज

शिखर पर है, कल वह अधर में भी आ सकता है।
—(ऋग्वेद, 10/117/5)

❖ मन को इधर-उधर न भटकाकर सर्वहित में लगाना चाहिए।
—(ऋग्वेद, 8/25/1)

❖ उत्तम शास्त्रादि का मनन करें। —(ऋग्वेद, 5/35/8)

❖ महान् बनकर शत्रुनाशक बनो। —(ऋग्वेद, 9/1/9)

❖ श्रेष्ठ मनुष्य निज गुणों के कारण सबका मित्र होता है।
—(ऋग्वेद, 5/81/4)

❖ यज्ञ करने वाले कर्त्ता को श्रेष्ठ शक्ति प्राप्त होती है।
—(ऋग्वेद, 1/83/03)

❖ मनुष्य स्वभाव से पुरातन का पुजारी है, कुछ ही हैं जो नया कदम उठाते हैं, वे सर्यू समान अपनी प्रतिभा से यशस्वी होते हैं। —(ऋग्वेद, 9/23/2)

❖ राष्ट्र-ध्वज को ऊँचा उठाए रखो। —(ऋग्वेद, 3/8/8)

❖ मनुष्य जिस पदार्थ में मन लगा लेता है, उसे निज पुरुषार्थ से प्राप्त कर लेता है। —(ऋग्वेद, 5/44/8)

❖ मनुष्य जिस लक्ष्य से पुरुषार्थ करता है उस लक्ष्य को स्वयं अपने प्रयत्न से ही प्राप्त कर सकता है।
—(ऋग्वेद, 5/44/8)

❖ कृपणता एवं लोभ की प्रवृत्ति का त्याग कर दो, यह विनाश कर देगी। —(ऋग्वेद, 6/51/4)

❖ किसी भी अन्य व्यक्ति की धन-सम्पदा को प्राप्त करने का लोभ न करो। —(ऋग्वेद, 5/70/4)

❖ सुवचन बोलने में तत्पर होना चाहिए।
—(ऋग्वेद, 10/39/2)

❖ घी और शहद से भी अधिक स्वादिष्ट और मधुर वचन बोलो।
—(ऋग्वेद, 87/24/20)

❖ अपने शुद्ध सरल व्यवहार से जीवन संगीत को मधुर बनाओ, मनस्वी बनो, जीवन में दिव्यता धारण करो।
—(ऋग्वेद, 10/53/6)

❖ गतिशील व्यक्ति वृद्ध नहीं होता। —(ऋग्वेद, 7/21/5)

❖ हे वधू ! तू ससुर, सास, ननद और देवरों के साथ गृहस्वामिनी के रूप में रह। —(ऋग्वेद, 10/85/46)

❖ हे प्रभो ! हम आपके निर्दिष्ट व्रतों का पालन करते हुए सदैव निष्पाप जीवन व्यतीत कर सकें, यही विनय है।
—(ऋग्वेद, 5/82/6)

❖ विद्वानों का अनादर मत करो। —(ऋग्वेद, 7/60/8)

❖ विद्वान लोग यज्ञकर्ता, पुरुषार्थी तथा भक्त को चाहते हैं,

आलसी से प्रेम नहीं करते। —(ऋग्वेद, 8/2/18)

❖ विद्या ज्ञान से जागत्‌रूपी महासागर का बोध करती है और समस्त बुद्धियों को प्रकाशित करती है। —(ऋग्वेद, 1/3/30)

❖ जीवन रूपी सरिता का मार्ग कठोर चट्टानों से भरा है किन्तु वीर बनो और पूर्ण विश्वास से कार्य को प्रारम्भ कर दो।
—(ऋग्वेद, 10/53/8)

❖ विषय-भोग जन्य चिन्ताएँ चूहे की तरह खा जाती हैं।
—(ऋग्वेद, 1/105/8)

❖ वीर पुरुष सर्वत्र बिना रोक-टोक आते-जाते हैं।
—(ऋग्वेद, -7/15/8)

❖ ज्ञान, धन तथा अन्न से युक्त होकर अपनी शारीरिक उन्नति कर। —(ऋग्वेद, 7/19/11)

❖ शरीर सुदृढ़ अंगों से युक्त रखें।
—(ऋग्वेद, 1/87/8)

❖ लौकिक धन वैभव के अपार सागर में स्थित मनुष्य भी सच्ची शान्ति की प्यास से व्याकुल रहता है। —(ऋग्वेद, 7/89/4)

❖ व्यर्थ शोक न करो, उन्माद ग्रस्त न बनो, भेड़िये समान कुटिल व्यक्तियों के वश में न आओ। —(ऋग्वेद, 10/95/15)

❖ श्रद्धावान व्यक्ति को योगक्षेम की रक्षा भगवान स्वयं करता

है, उसके लोक-परलोक भगवत्कृपा से स्वयं यशस्वी रहते हैं।
—(ऋग्वेद, 5/37/5)

❖ ईश्वर के प्रति श्रद्धावान व्यक्ति को अन्दर के पाप-सन्ताप नहीं सताते। —(ऋग्वेद, 5/1/8)

❖ सच्ची श्रद्धा और ज्ञान के सहारे मनुष्य भवसागर पार कर जाता है, अज्ञानी लोग बीच में डूब जाते हैं। —(ऋग्वेद, 9/64/3)

❖ कानों से कल्याणकारी भाषण सुनें। —(ऋग्वेद, 1/89/8)

❖ मन में दृढ़ संकल्प हो तो पुरुषार्थ से कार्य-सिद्धि अवश्य होती है। —(ऋग्वेद, 5/44/8)

❖ समान, स्वभाव वालों की परस्पर संगति उत्तम होती है।
—(ऋग्वेद, 8/43/14)

❖ मिलकर चलो, मिलकर बोलो। तुम्हारे मन एक प्रकार के विचार करें। —(ऋग्वेद, 10/13/2)

❖ सज्जन सत्य के मार्ग पर चलते हैं।
—(ऋग्वेद, 2/24/3)

❖ तू छलकपट से दूर है इसीलिए तेरा नाम सत्य है।
—(ऋग्वेद, 5/44/2)

❖ सत्यमार्गी विश्व में सुशोभित होता है।
—(ऋग्वेद, 5/63/7)

❖ बहुत सन्तान वाले बहुत कष्ट पाते हैं।—(ऋग्वेद, 1/164/32)

❖ संयमी सबको वश में कर सकता है।—(ऋग्वेद, 10/84/3)

❖ दिवंगत आत्माओं के ही साधनों को अपनाकरपूरे उत्साह और बल से अपने लक्ष्य की ओर बढ़ते रहो।—(ऋग्वेद, 10/18/9)

❖ तपस्यापूर्ण साधना से कार्य उज्ज्वल और निर्मल होते हैं, जैसे आग से सोना। —(ऋग्वेद, 10/16/4)

❖ मनुष्य निज सामर्थ्य के कारण जाना जाता है।
—(ऋग्वेद, 4/39/5)

❖ प्रभु साक्षात्कार का सौभाग्य उन्हें ही प्राप्त होता है, जो सरल स्वभाव से विश्व कल्याण की कामना करते हैं।
—(ऋग्वेद, 6/2/2)

❖ प्रभु का साक्षात्कार गहन चिन्तन और मनन से प्राप्त होता है।
—(ऋग्वेद, 5/12/6)

❖ जनमत-सम्मत स्वराज्य की रक्षा व हित के लिए हम सब सदैव यत्न करते रहें। —(ऋग्वेद, 5/66/6)

❖ पूर्णतः स्वस्थ मन और सशक्त देह द्वारा ही कार्य सिद्धि संभव है। —(ऋग्वेद, 8/19/20)

❖ स्वावलम्बन को अपनी पुष्टि के लिए धारण करो।
—(ऋग्वेद, 2/5/7)

❖ ज्ञानी सिंह की तरह गर्जते हैं। —(ऋग्वेद, 1/64/8)

❖ सभ्य ज्ञानी प्रशस्त धन को धारण करता है।
— (ऋग्वेद, 2/24/13)

❖ जिस मार्ग पर ज्ञानी जाते हैं, उस पर मूर्ख नहीं जाते।
—(ऋग्वेद, 8/5/39)

❖ उत्तम ज्ञानी को ही श्रेष्ठ कार्यों के लिए चुना जाता है।
—(ऋग्वेद, 9/64/8)

❖ क्षेत्र को जानने वाला (ज्ञानी) ही पूछने वाले को बता सकता है। —(ऋग्वेद, 9/70/9)

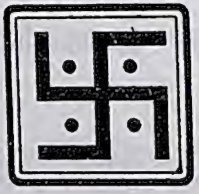

वेदों के कष्ट निवारक टोने-टोटके एवं वैदिक मन्त्र साधना

❑डॉ० उमेश पुरी 'ज्ञानेश्वर'

किसी भी क्षेत्र में सफलता पाने के लिए उपाय करना आवश्यक है। इस पुस्तक में वेदों के छोटे-छोटे अचूक टोने-टोटके एवं मन्त्र दिए गए हैं जिनको विधिनुसार प्रयोग में लाने से उपाय के बल पर सफलता शीघ्र मिलती है।

प्रकाशक

रणधीर प्रकाशन, हरिद्वार

प्रसिद्ध ज्योतिषाचार्य डॉ० उमेश पुरी 'ज्ञानेश्वर'
की ज्योतिष सिखाने वाली अनमोल पुस्तकें

1. आपकी राशि क्या कहती है ?
2. अंक बोलते हैं।
3. ग्रह परिचय
4. नक्षत्र ज्ञान
5. गोचर ज्योतिष
6. ज्योतिष गुप्त प्रश्नोत्तरी
7. शेयर बाजार और आपका भाग्य
8. मुहूर्त निकालिए
9. लघुपाराशरी
10. भारतीय ज्योतिष संग्रह
11. भृगुसूत्रम्
12. शीघ्रबोधः
13. बृहदवकहड़ाचक्रम्
14. वर्षफल विचार (प्रेस में)

प्रकाशक
रणधीर प्रकाशन, हरिद्वार

वेदों को निकट से जानने के लिए वेद-जिज्ञासुओं हेतु

ज्ञानोपयोगी वेद पुस्तक माला

के अन्तर्गत

डॉ० उमेशपुरी 'ज्ञानेश्वर' रचित

उत्कृष्ट वैदिक ग्रन्थ

1. ऋग्वेद-सार (जीवन लक्ष्य प्राप्त कराने वाली ऋग्वेद की 108 सूक्तियाँ)
2. यजुर्वेद-सार (जीवन लक्ष्य प्राप्त कराने वाली यजुर्वेद की 108 सूक्तियाँ)
3. सामवेद-सार (जीवन लक्ष्य प्राप्त कराने वाली सामवेद की 108 सूक्तियाँ)
4. अथर्ववेद-सार (जीवन लक्ष्य प्राप्त कराने वाली अथर्ववेद की 108 सूक्तियाँ)
5. वेदाध्ययन कैसे करें ?
6. वेदों के कष्ट-निवारण टोने-टोटके एवं वैदिक मन्त्र साधना
7. वेदों में विज्ञान
8. वेदों के देवी-देवता
9. ऋग्वेद (हिन्दी व्याख्या सहित)
10. यजुर्वेद (हिन्दी व्याख्या सहित)
11. सामवेद (हिन्दी व्याख्या सहित)
12. अथर्ववेद (हिन्दी व्याख्या सहित)

प्रकाशक

रणधीर प्रकाशन, हरिद्वार

वेद ज्ञान का महासागर है। वेदों का स्वाध्याय सच्चे अर्थों में जीवन का निर्माण करना है।

मूल संस्कृत ऋचाओं एवं सरल हिन्दी अनुवाद सहित चारों वेद शीघ्र प्रकाशित हो रहे हैं। वेदों के विषय में प्रत्येक हिन्दू परिवार में श्रद्धा पायी जाती है। लेकिन अधिकांश ने वेदों को न तो देखा है और न पढ़ा है। इसका कारण है कि वेदों का पुस्तक के रूप में पाया जाना ही दुर्लभ है। हिन्दी में वेदों को जानने-समझने के लिए इनका अध्ययन करके विद्वान डॉ० उमेश पुरी 'ज्ञानेश्वर' ने इन्हें सबके लिए प्रस्तुत करने का संकल्प लिया है। चारों वेदों का पुस्तकाकार में भव्य प्रकाशन करने की योजना है। चारों वेद 1995 में बाजार में उपलब्ध होंगे जिनका मूल्य लगभग 1000 रुपये होगा। यदि आप घर बैठे मंगाना चाहें तो 500 रुपयें पेशगी भेजकर बुक करा लें। क्योंकि सीमित संख्या में ही छापा जायेगा और समाप्त होने पर दुबारा छपने की लम्बी प्रतीक्षा करनी होगी। इस प्रकार 500 रुपये जमा कराने वालों को केवल 300 रुपये का वी. पी. करके चारों वेद भेजे जायेंगे जिससे डाक व्यय सहित कुल 250 रुपये का लाभ आपको होगा।

प्रकाशक

रणधीर प्रकाशन, हरिद्वार

जीवन को सफल बनाने वाले अनमोल ग्रन्थ

- प्रार्थना और उसका प्रभाव
- साधना, ध्यान और जप
- मनन-चिन्तन
- भोग से योग की ओर
- रामायण-महाभारत के उपदेश
- पुराणों के उपदेश
- उपनिषदों के उपदेश
- वेदों के उपदेश

मूल्य एवं अन्य जानकारी के लिए लिखें–

प्रकाशक

रणधीर प्रकाशनं, हरिद्वार

कैसे करें : वेदाध्ययन ?

❑ डॉ० उमेश पुरी 'ज्ञानेश्वर'

आप वेदों को कठिन समझते हैं इसलिए पढ़ना नहीं चाहते। यह जान लें कि वेद ज्ञान का महासागर है। वेदों का स्वाध्याय सच्चे अर्थों में जीवन का निर्माण करना है। यह पुस्तक वेद-पाठकों के लिए उपयोगी है। इसको पढ़ना न भूलें क्योंकि यह आपको वेदमार्ग पर प्रवृत्त करेगी।

प्रकाशक

रणधीर प्रकाशन, हरिद्वार

वेदों का स्वाध्याय सच्चे अर्थों में जीवन का निर्माण करना है।

ऋग्वेद सार

- ऋग्वेद का अमृत 108 सूक्तियों में संकलित किया गया है इनको पढ़कर, समझकर व्यवहार में लायेंगे तो निःसन्देह आप जीवन-लक्ष्य पा सकेंगे।
- ये अमृतमयी 108 सूक्तियाँ आपको ऋग्वेद का एक-एक श्लोक पढ़ने को प्रेरित करेंगी।
- ऋग्वेद उत्तम विचारों का महासागर है। ज्ञान से कर्म करने की प्रेरणा मिलती है और कर्म से लक्ष्य प्राप्ति का मार्ग सुगम हो जाता है।
- ऋग्वेद-सार को आपके लिए संकलित व संपादित किया है आपके प्रिय लेखक डॉ० उमेश पुरी 'ज्ञानेश्वर' ने। इस पुस्तक से ज्ञान का संवर्धन हो सकेगा। ज्ञानयोगी बनने का सुअवसर न गवाएँ।

यजुर्वेद सार

- यजुर्वेद सार का अमृत 108 सूक्तियों में संकलित किया गया है। इनको पढ़ व समझकर व्यवहार में लायेंगे तो निःसन्देह आपका उन्नतिपथ प्रशस्त होगा।
- ये अमृतमयी 108 सूक्तियाँ आपको यजुर्वेद की एक-एक श्लोक पढ़ने को बाध्य करेंगी।
- यजुर्वेद कर्म प्रधान है और इसमें श्रेष्ठतम् कर्मो को करने का आदेश दिया गया है। कर्म से उन्नति पथ प्रशस्त होता है।
- यजुर्वेद सार को आपके लिए संकलित व संपादित किया है आपके प्रिय लेखक डॉ० उमेश पुरी 'ज्ञानेश्वर' ने इस पुस्तक से कर्म करने की प्रेरणा मिलेगी। कर्मयोगी बनने का सुअवसर न गवाएँ।

प्रकाशक

रणधीर प्रकाशन, हरिद्वार

कैसे करें : वेदाध्ययन ?

❑ डॉ० उमेश पुरी 'ज्ञानेश्वर'

आप वेदों को कठिन समझते हैं इसलिए पढ़ना नहीं चाहते। यह जान लें कि वेद ज्ञान का महासागर है। वेदों का स्वाध्याय सच्चे अर्थों में जीवन का निर्माण करना है। यह पुस्तक वेद-पाठकों के लिए उपयोगी है। इसको पढ़ना न भूलें क्योंकि यह आपको वेदमार्ग पर प्रवृत्त करेगी।

प्रकाशक

रणधीर प्रकाशन, हरिद्वार

वेदों का स्वाध्याय सच्चे अर्थों में जीवन का निर्माण करना है।

ऋग्वेद सार

- ऋग्वेद का अमृत 108 सूक्तियों में संकलित किया गया है इनको पढ़कर, समझकर व्यवहार में लायेंगे तो निःसन्देह आप जीवन-लक्ष्य पा सकेंगे।
- ये अमृतमयी 108 सूक्तियाँ आपको ऋग्वेद का एक-एक श्लोक पढ़ने को प्रेरित करेंगी।
- ऋग्वेद उत्तम विचारों का महासागर है। ज्ञान से कर्म करने की प्रेरणा मिलती है और कर्म से लक्ष्य प्राप्ति का मार्ग सुगम हो जाता है।
- ऋग्वेद-सार को आपके लिए संकलित व संपादित किया है आपके प्रिय लेखक डॉ० उमेश पुरी 'ज्ञानेश्वर' ने। इस पुस्तक से ज्ञान का संवर्धन हो सकेगा। ज्ञानयोगी बनने का सुअवसर न गवाएँ।

यजुर्वेद सार

- यजुर्वेद सार का अमृत 108 सूक्तियों में संकलित किया गया है। इनको पढ़ व समझकर व्यवहार में लायेंगे तो निःसन्देह आपका उन्नतिपथ प्रशस्त होगा।
- ये अमृतमयी 108 सूक्तियाँ आपको यजुर्वेद की एक-एक श्लोक पढ़ने को बाध्य करेंगी।
- यजुर्वेद कर्म प्रधान है और इसमें श्रेष्ठतम् कर्मों को करने का आदेश दिया गया है। कर्म से उन्नति पथ प्रशस्त होता है।
- यजुर्वेद सार को आपके लिए संकलित व संपादित किया है आपके प्रिय लेखक डॉ० उमेश पुरी 'ज्ञानेश्वर' ने इस पुस्तक से कर्म करने की प्रेरणा मिलेगी। कर्मयोगी बनने का सुअवसर न गवाएँ।

प्रकाशक

रणधीर प्रकाशन, हरिद्वार

वेदों का स्वाध्याय सच्चे अर्थों में जीवन का निर्माण करना है।

सामवेद सार

- सामवेद का अमृत 108 सूक्तियों में संकलित किया गया है। इनको पढ़ व समझकर व्यवहार में लायेंगे तो निःसन्देह आप सुख के भागी होंगे।
- ये अमृतमयी 108 सूक्तियाँ आपको सामवेद का एक-एक श्लोक पढ़ने को बाध्य करेंगी।
- सामवेद आकार में लघु पर महत्त्व में दीर्घ है—इसकी पुष्टि आप यह पुस्तक पढ़कर कर सकेंगे।
- सामवेद-सार को आपके लिए संकलित व संपादित किया है आपके प्रिय लेखक डॉ० उमेश पुरी 'ज्ञानेश्वर' ने। इस पुस्तक में जीवन का सच्चा सुख पाने का मार्ग मिलेगा। इसे पढ़ने का सुअवसर न गवाएँ।

अथर्ववेद सार

- अथर्ववेद का अमृत 108 सूक्तियों में संकलित किया गया है। इनको पढ़कर व समझकर व्यवहार में लायेंगे तो निःसंदेह तन-मन की शान्ति पायेंगे।
- ये अमृतमयी 108 सूक्तियाँ आपको अथर्ववेद सार का एक-एक श्लोक पढ़ने को बाध्य करेंगी।
- अथर्ववेद सार, कर्म एवं उपासना के गूढ़ रहस्यों का संगम है। यह वेद प्राकृतिक एवं आध्यात्मिक रहस्यों का महासागर है।
- अथर्ववेद सार को आपके लिए संकलित व संपादित किया है आपके प्रिय लेखक डॉ० उमेश पुरी 'ज्ञानेश्वर' ने। जीवन संग्राम में विजय कैसे पाएँ-यह रहस्य जानने के लिए इस पुस्तक को पढ़ना न भूलें।

प्रकाशक

रणधीर प्रकाशन, हरिद्वार

वेदों का स्वाध्याय सच्चे अर्थों में
जीवन का निर्माण करना है।

ऋग्वेद सार

- **ऋग्वेद** का अमृत १०८ सूक्तियों में संकलित किया गया है। इनको पढ़ व समझकर व्यवहार में लायेंगे तो निस्सन्देह आप जीवन-लक्ष्य पा सकेंगे।
- ये अमृतमयी १०८ सूक्तियाँ आपको **ऋग्वेद** का एक-एक श्लोक पढ़ने को प्रेरित करेंगी।
- **ऋग्वेद** उत्तम विचारों का महासागर है। ज्ञान से कर्म करने की प्रेरणा मिलती है और कर्म से लक्ष्य-प्राप्ति का मार्ग सुगम हो जाता है।
- **ऋग्वेद-सार** को आपके लिए संकलित व संपादित किया है आपके प्रिय लेखक **डॉ. उमेश पुरी 'ज्ञानेश्वर'** ने। इस पुस्तक से ज्ञान का संवर्धन हो सकेगा। ज्ञान योगी बनने का सुअवसर न गवाएँ।

रणधीर प्रकाशन, हरिद्वार